संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

वर्ष : १३
अंक : १२५
मई २००३
वैशाख-ज्येष्ठ
वि. सं. २०६०

हिन्दी

विद्यार्थी विशेषांक

मैकाले शिक्षा-पद्धति बनाम
गुरुकुल शिक्षा-पद्धति !
श्रेष्ठ कौनसी ?

परम पूज्य
संत श्री आसारामजी बापू

विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास की यौगिक युक्तियाँ।

भारतीय परम्पराएँ कितनी महत्त्वपूर्ण ! एक वैज्ञानिक विश्लेषण

अमदावाद आश्रम में सत्संगियों के बीच बैठे राजस्थान के सरल स्वभाव उपमुख्यमंत्री श्री बनवारीलाल भैरवा।

साबरमती से आश्रम की ओर आ रहे मार्ग का नाम 'संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग' रखा गया। समिति की ओर
महानगरपालिका की इस साधुता का अभिवादन है।

आत्मानुभव की गहराइयों को स्पर्श करके आनेवाली पूज्यश्री की अमृतवाणी का श्रवण करते हुए पुण्यात्मा भक्त, चेटीचंड शिविर (अमदावाद)

अमृत से भी मीठे हैं, गुरुवर के वचन। बार-बार होते रहें, हमें गुरुदेव के दर्शन॥
पूज्यश्री के सत्संग-सान्निध्य का लाभ लेकर कृतकृत्य हुए सांताक्रुजवासी (मुंबई, महा.)।

अगर न मिलता बापूजी का सत्संग प्यारा। कैसे खिलता यह जीवनपुष्प हमारा ?
विद्यार्थी-जीवन में सफलता की कुंजियाँ पाने हेतु सांताक्रुज में उमड़ पड़ा छात्र-छात्राओं का सैलाब।

ऋषि प्रसाद

वर्ष : १३

अंक : १२५

९ मई २००३

वैशाख-ज्येष्ठ, विक्रम संवत् २०६०

मूल्य : रु. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक : रु. ५०/-

(२) पंचवार्षिक : रु. २००/-

(३) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में

(१) वार्षिक : रु. ७५/-

(२) पंचवार्षिक : रु. ३००/-

(३) आजीवन : रु. ७५०/-

विदेशों में

(१) वार्षिक : US $ 20

(२) पंचवार्षिक : US $ 80

(३) आजीवन : US $ 200

कार्यालय **'ऋषि प्रसाद'**

श्री योग वेदान्त सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.

फोन : (०७९) ७५०५०१०-११.

e-mail : ashramindia@ashram.org

web-site : www.ashram.org

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम

प्रकाशक और मुद्रक : कौशिक वाणी

प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदान्त सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा (गांधीनगर), साबरमती, अमदावाद-५.

मुद्रण स्थल : पारिजात प्रिन्टरी, राणीप और विनय प्रिन्टिंग प्रेस, अमदावाद।

सम्पादक : कौशिक वाणी

सहसम्पादक : प्रे. खो. मकवाणा

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

अनुक्रम

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग

SONY चैनल पर 'संत आसाराम वाणी' सोमवार से शुक्रवार सुबह ७.३० से ८ व शनिवार और रविवार सुबह ७.०० से ७.३० **संस्कार चैनल** पर 'परम पूज्य लोकसंत श्री आसारामजी बापू की अमृतवर्षा' रोज दोप. २.०० से २.३० तथा रात्रि १०.०० से १०.३० *'संकीर्तन'* सोमवार तथा बुधवार सुबह ९.३० और मंगल तथा गुरुवार शाम ५.०० बजे

दुःखों से अगर चोट खायी न होती...

दुःखों से अगर चोट खायी न होती।
तुम्हारी प्रभु याद आयी न होती ॥
जगाते न 'गर तुम गुरु ज्ञान द्वारा।
कभी हमसे कोई भलाई न होती ॥
कहीं भी हमें चैन मिलता न जग में।
शरण यदि परम शांतिदायी न होती ॥
सदा बंद रहती ये आँखें हृदय की।
जो अपनी खबर तुमसे पायी न होती ॥
दयासिंधु तुमको समझ ही न पाते।
समय पर जो लज्जा बचायी न होती ॥
किसीका कहीं भी नहीं था ठिकाना।
तुम्हारे यहाँ जो सुनवायी न होती ॥
बता दो प्रभु ! तुमको पाऊँ मैं कैसे।
विमुख होके सन्मुख अब आऊँ मैं कैसे ॥
विषय वासनाएँ निकलती नहीं हैं।
ये चंचल चपल मन मनाऊँ मैं कैसे ॥
कभी सोचता हूँ तुमको रोकर पुकारूँ।
पर ऐसा हृदय को बनाऊँ मैं कैसे ॥
कठिन मोहमाया में अतिशय भ्रमित हूँ।
प्रभो ! बिन दया पार पाऊँ मैं कैसे ॥
हृदय दिव्य आलोक से जो विमल हो।
विनय किस तरह तो सुनाऊँ मैं कैसे ॥
दयामय तुम्हीं मुझ पथिक को सँभालो।
मैं कितना पतित हूँ दिखाऊँ मैं कैसे ॥

- पथिकजी महाराज

*** भगवन्नाम भगवान को हमारी ओर खींचता है और हमें भगवान की ओर ले जाता है।**

*** विषयसुख की चाह करना ही दुःख को आमंत्रण देना है।**

नौनिहालों को पूज्य बापूजी का उद्बोधन

प्रिय विद्यार्थियो !

तुम भारत का भविष्य, विश्व का गौरव और अपने माता-पिता की शान हो। तुम्हारे भीतर बीजरूप में ईश्वर का असीम सामर्थ्य छुपा हुआ है। जिन्होंने भी अपनी सुषुप्त योग्यताओं को जगाया, वे महान हो गये। इतिहास के पन्नों पर उनका नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित हो गया। वे संसार में अपनी अमिट छाप छोड़ गये और मरकर भी अमर हो गये। वास्तव में, इतिहास उन चन्द महापुरुषों और वीरों की ही गाथा है जिनमें अदम्य साहस, संयम, शौर्य और पराक्रम कूट-कूटकर भरा हुआ था। तुम्हारे भीतर भी ये शक्तियाँ बीजरूप में पड़ी हैं। अपनी इन शक्तियों को तुम जितने अंश में विकसित करोगे, उतने ही महान हो जाओगे।

आज जो भी संत-महात्मा हैं, अच्छे ईमानदार नेता और समाज के अग्रणी हैं, वे भी पहले तुम्हारे जैसे बालक ही थे। परंतु उन्होंने दृढ़ संकल्प, पुरुषार्थ और संयम का अवलंबन लेकर अपने व्यक्तित्व को निखारा और आज लाखों के प्रेरणास्रोत बन गये। महापुरुषों के मार्गदर्शन में चलकर व उनके दिव्य जीवन से प्रेरणा पाकर तुम भी महान हो जाओ।

हे युवानो ! संसार में ऐसी कोई वस्तु या स्थिति नहीं है जो संकल्प-बल और पुरुषार्थ के द्वारा प्राप्त न हो सके। पूर्ण उत्साह और लगन से किया गया पुरुषार्थ कभी व्यर्थ नहीं जाता।

प्यारे विद्यार्थियो ! तुम जो बनना चाहते हो, उसके लिए आवश्यक सामर्थ्य तुम्हारे भीतर ही विद्यमान है, पर वह सुषुप्त अवस्था में पड़ा है। उसे

जगाकर तुम सफलता की बुलंदियों को छू सकते हो।

तुम वर्तमान में चाहे कितने भी निम्न श्रेणी के विद्यार्थी क्यों न हो लेकिन इन्द्रिय-संयम, एकाग्रता, पुरुषार्थ और दृढ़ संकल्प के द्वारा आगे चलकर उच्चतम योग्यता प्राप्त कर सकते हो। इतिहास में ऐसे कई दृष्टांत देखने को मिलते हैं। पाणिनि नाम का बालक पहली कक्षा में वर्षों तक अभ्यास करने के बाद भी लगातार अनुत्तीर्ण ही होता रहा, पर बाद में वही बालक अपने दृढ़ संकल्प, पुरुषार्थ, उपासना और योग के अभ्यास से संस्कृत व्याकरण का विश्वविख्यात रचयिता बना। आज भी पाणिनि का संस्कृत व्याकरण 'अष्टाध्यायी' अद्वितीय माना जाता है।

अपनी उन्नति में बाधक, दुर्बलता के विचारों को जड़ से उखाड़ फेंको। उनके मूल पर ही कुठाराघात करो।

अपनी मानसिक शक्तियों को नष्ट करनेवाली बुरी आदतों, तम्बाकू-गुटखे के व्यसनों और टी.वी. चैनलों के भड़कीले कार्यक्रमों में समय बिगाड़ना, फिल्में देखना, विडियो गेम्स आदि से आँखें बिगाड़ना - यह अपना पतन आप आमंत्रित करना है। हलके संग का त्याग, सत्शास्त्रों का अध्ययन, सत्संग-श्रवण, ध्यान, सारस्वत्य मंत्र का जप - ये बुद्धिशक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए अत्यंत उपयोगी साधन हैं। तुम्हारा भविष्य तुम्हारे ही हाथों में है। तुम्हें महान, तेजस्वी व श्रेष्ठ विद्यार्थी बनना हो तो अभी से दृढ़ संकल्प करके त्याज्य चीजों को छोड़ो और जीवन-विकास में उपयोगी मूल्यों को अपनाओ। हजार बार फिसल जाने पर भी फिर से हिम्मत करो... विजय तुम्हारी ही होगी।

कदम अपने आगे बढ़ाता चला जा...

शाबाश वीर ! शाबाश !!

भारत के लाल ! दीनता-हीनता के विचारों को कुचल डालो।

करोगे न हिम्मत ? चलोगे न सत्पथ पर ? होगे न निहाल ?

ॐ हिम्मत... ॐ उद्यम... ॐ साहस... ॐ बुद्धिशक्ति... ॐ पराक्रम... कदम-कदम पर परमात्मा तुम्हारे साथ हैं... ॐ... ॐ...

तीन प्रकार की विद्याएँ

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

तीन प्रकार की विद्याएँ होती हैं :

(१) **लौकिक विद्या** : जो विद्या हम विद्यालयों-महाविद्यालयों में पढ़ते हैं। यह केवल पेट भरने की विद्या है।

(२) **योगविद्या** : इहलोक और परलोक के रहस्यों को जानने की विद्या।

(३) **आत्मविद्या** : आत्मा-परमात्मा को जानने की विद्या, परमात्म-साक्षात्कार करने की विद्या, परमात्मा के साथ एकता स्थापित करनेवाली विद्या।

लौकिक विद्या शारीरिक सुख-सुविधा पाने के काम आती है, योगविद्या से इहलोक और परलोक के रहस्य खुलने लगते हैं और आत्मविद्या से परमात्मा के साथ एकता हो जाती है। जीवन में इन तीनों विद्याओं की प्राप्ति होनी चाहिए। लौकिक विद्या तो पा ली लेकिन योगविद्या और आत्मविद्या नहीं पायी तो लौकिक चीजें बहुत मिलेंगी लेकिन भीतर अशांति होगी, दुराचार होगा। लौकिक विद्या को पाकर थोड़ा कुछ सीख लिया, यहाँ तक कि बम बनाना भी सीख गये, फिर भी हृदय में अशांति की आग जलती रहेगी। अतः लौकिक विद्या के साथ योगविद्या और आत्मविद्या अत्यावश्यक हैं।

जो लोग योगविद्या और आत्मविद्या का अभ्यास करते हैं, सुबह के समय थोड़ा योग व ध्यान का अभ्यास करते हैं वे लौकिक विद्या में भी शीघ्रता से सफल होते हैं। लौकिक विद्या के अच्छे-अच्छे रहस्य वे खोज सकते हैं।

वैज्ञानिक भी जब जाने-अनजाने थोड़ा-सा

योगविद्या की शरण जाते हैं, खोज करते-करते एकाग्र हो जाते हैं, तन्मय हो जाते हैं तभी कोई रहस्य उनके हाथ लगता है। वे ही वैज्ञानिक अगर योगी होकर खोज करें तो...

योगियों ने तो ऐसी-ऐसी खोजें कर रखी हैं जिनका बयान करना भी आज के आदमी के बस की बात नहीं है।

योगियों ने स्थूल शरीर के अन्दर की संरचना का अध्ययन काट-छाँटकर (शल्यक्रिया करके) नहीं वरन् ध्यान की विधि से किया है। नाभिकेन्द्र पर ध्यान केन्द्रित किया जाय तो शरीर के अन्दर की संरचना ज्यों-की-त्यों दिखती है तथा शरीर की छोटी-बड़ी सब नाड़ियों की संरचना का पता चलता है। योगियों ने ही खोज करके बताया कि मानव-शरीर में ७२००० नाड़ियाँ हैं। ऐहिक विद्या से जिन केन्द्रों के दर्शन नहीं होते उन मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धाख्य, आज्ञा और सहस्रार केन्द्रों की खोज योगविद्या के द्वारा ही हुई है। 'एक-एक केन्द्र की क्या-क्या विशेषताएँ हैं ? उन केन्द्रों का रूपान्तरण और विकास कैसे किया जाय ?' ये सब भी योगविद्या के द्वारा ही जाना गया है।

यदि मूलाधार केन्द्र का रूपान्तरण होता है तो 'काम' विकार 'राम' में बदल जाता है। व्यक्ति की दृष्टि विशाल हो जाती है। उसके कार्य **बहुजनहिताय-बहुजनसुखाय** होने लगते हैं। ऐसा व्यक्ति यशस्वी हो जाता है। उसके पदचिह्नों पर चलने के लिए कई लोग तैयार हो जाते हैं। जैसे, महात्मा गाँधी। उनका 'काम' केन्द्र 'राम' में रूपान्तरित हुआ तो वे विश्वविख्यात हो गये।

दूसरा केन्द्र है स्वाधिष्ठान। उसमें भय, घृणा, हिंसा और स्पर्धा के भाव रहते हैं। यह दूसरा केन्द्र यदि रूपान्तरित होता है तो भय की जगह निर्भयता, हिंसा की जगह अहिंसा, घृणा की जगह प्रेम और स्पर्धा की जगह समता का जन्म होता है। व्यक्ति अपने लिए और दूसरों के लिए बड़े काम का हो जाता है, बड़ा प्यारा हो जाता है।

अपने शरीर में ऐसे जो सात केन्द्र हैं उनकी खोज योगविद्या के द्वारा ही हुई है। लौकिक विद्या ने उनकी खोज नहीं की। ऐसे ही 'सृष्टि का आधार क्या है ? सृष्टिकर्ता से कैसे मिलें ? जीते-जी मुक्ति का अनुभव कैसे हो ?' इनकी खोज ब्रह्मविद्या के द्वारा ही हुई है।

हम लोग लौकिक विद्या में तो थोड़ा-बहुत आगे बढ गये हैं लेकिन योगविद्या का ज्ञान नहीं है, इसलिए विद्यार्थियों का शरीर जितना तंदुरुस्त होना चाहिए और मन जितना प्रसन्न और समझयुक्त होना चाहिए, उतना नहीं है। इसीलिए चलचित्र देखकर कई पढ़े-लिखे, समझदार व्यक्ति भी आत्महत्या कर लेते हैं। जैसे 'एक दूजे के लिए' फिल्म देखकर कई युवान-युवतियों ने आत्महत्या कर ली थी।

ऐहिक या लौकिक विद्या के साथ यदि योगविद्या का आश्रय नहीं है तो लौकिक विद्या जाननेवाला भी रिश्वतखोरी करेगा, लड़ाई-झगड़े करके पेटपालू कुत्तों की नाई अपना जीवन बितायेगा। ऐहिक विद्या की यह एक बड़ी लाचारी है कि उसका ज्ञान पाने के बावजूद भी जीवन में कोई स्थायी सुख-शांति नहीं होती, शारीरिक स्वस्थता और मानसिक दृढ़ता नहीं होती। आजकल की ऐहिक विद्या ऐसी हो गयी है कि विद्यार्थी गुलाम बनकर ही विश्वविद्यालय से निकलते हैं। प्रमाणपत्र मिलने के बाद नौकरी की खोज में भटकते रहते हैं और नौकरी मिलने पर अंग्रेजी में कहते हैं : 'मैं भारत सरकार का उत्तम नौकर हूँ।'

आजकल की ऐहिक विद्या मनुष्य को नौकर बनाती है; इन्द्रियों, मन व अहंकार का गुलाम बनाती है। यह विद्या मनुष्य को ईर्ष्या और स्पर्धा से नहीं छुड़ाती, काम-क्रोध की चोटों से नहीं बचाती, लोक-लोकान्तर की गतिविधियों का ज्ञान नहीं कराती बल्कि उसको केवल पेट पालने के साधन प्रदान करती है, शरीर की सुविधाएँ बढ़ाने में मदद करती है। मनुष्य शारीरिक सुख-सुविधा के साधनों का जितना अधिक उपयोग करता है उतनी ही उन साधनों की लाचारी उसके चित्त में घुस जाती है। शारीरिक सुविधाएँ जितनी अधिक भोगी जाती हैं और योगविद्या की तरफ जितनी लापरवाही बरती जाती है, मनुष्य भीतर से उतना

ही अशांत होता जाता है। पाश्चात्य जगत का यही हाल है। वहाँ के लोगों ने ऐहिक विद्या में, तकनीकी जगत में खूब तरक्की की किंतु साथ-ही-साथ वहाँ अशांति भी उतनी ही बढ़ गयी।

ऐहिक विद्या को अगर योग का संपुट दिया जाय तो विद्यार्थी ओजस्वी-तेजस्वी बनता है। ऐहिक विद्या का आदर करना चाहिए किंतु योगविद्या और आत्मविद्या को भूलकर सिर्फ ऐहिक विद्या में ही पूरी तरह से गर्क हो जाना मानों, अपने जीवन का अनादर करना है। जिसने अपने जीवन का ही अनादर कर दिया वह जीवनदाता को कैसे जान सकता है, कैसे पा सकता है ? उसका आदर कैसे कर सकता है ? ...और जो अपने जीवन तथा जीवनदाता का आदर नहीं कर सकता, वह पूर्ण सुखी भी कैसे हो सकता है ?

ऑटोरिक्शे के पिछले पहिये ठीक हैं, अगला पहिया और स्टियरिंग नहीं हैं तो वह ढाँचामात्र दिखेगा, उससे यात्रा नहीं होगी। ऐसे ही जीवन में ऐहिक विद्या तो हो लेकिन उसके साथ योगविद्यारूपी पहिया न हो और ब्रह्मविद्यारूपी स्टियरिंग न हो तो मनुष्य अविद्या में ही उत्पन्न होकर, उसीमें ही जीकर, अंत में उसीमें ही मर जाता है। जैसे, पहिये और स्टियरिंग रहित ऑटोरिक्शा वहीं-का-वहीं पड़ा रहता है, वैसे ही ऐहिक विद्या के साथ-साथ योगविद्या और ब्रह्मविद्या नहीं मिली तो मनुष्य अविद्या या माया में ही पड़ा रहता है। माता के गर्भों में उलटा लटकता ही रहता है, जन्म-मरण के चक्र में फँसा ही रहता है।

ऐहिक विद्या को पाने का तो एक निश्चित समय होता है किंतु योगविद्या और ब्रह्मविद्या को पाने के लिए दस, पन्द्रह या बीस वर्ष की मुद्दत नहीं होती। जीवन में ऐहिक विद्या के साथ-साथ योगविद्या और ब्रह्मविद्या का अभ्यास करना ही चाहिए। यदि मनुष्य प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में योगविद्या का अभ्यास करे तो उस समय किया हुआ ध्यान बहुत लाभ देता है। जो लोग ब्रह्ममुहूर्त में जग जाते हैं वे बड़े तेजस्वी होते हैं। जीवन की शक्तियों के ह्रास तथा स्वप्नदोष होने का समय प्रायः ब्रह्ममुहूर्त के बाद का ही होता है। जो ब्रह्ममुहूर्त में जग जाता है उसके ओज-तेज की रक्षा होती है। जो ब्रह्ममुहूर्त में जगकर जप-ध्यान में लग जाता है, उसका ओज-तेज बढ़ता है और वह अध्यात्म की ऊँचाइयों को छू सकता है।

सूर्योदय से पहले, संध्या के समय एकाग्र होने में बड़ी मदद मिलती है। यदि विद्यार्थी ब्रह्ममुहूर्त में उठकर ध्यान करे, सूर्योदय के समय ध्यान तथा ब्रह्मविद्या का अभ्यास करे और शिक्षकों से थोड़ी लौकिक विद्या सीखे तो बाकी की विद्या उसके अंदर से ही प्रकट होने लगेगी।

संत तुकाराम लौकिक विद्या पढ़ने में अधिक समय न दे सके किंतु आज उनके द्वारा गाये गये अभंग महाराष्ट्र के विश्वविद्यालयों में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में पढ़ाये जाते हैं।

संत एकनाथजी लौकिक विद्या के साथ-साथ योगविद्या भी पढ़े थे। स्वामी विवेकानंद लौकिक विद्या तो पढ़े थे, साथ ही उन्होंने आत्मविद्या का ज्ञान भी प्राप्त किया था। जिन्होंने लौकिक विद्या सीखी है, अगर उन्हें योगविद्या और आत्मविद्या भी मिल जाय तो उनके जीवन में चार चाँद लग जाते हैं। उनके द्वारा बहुतों का सच्चा व स्थायी हित हो सकता है।

योगविद्या एक बलप्रद विद्या है। यह बल अहंकार बढ़ानेवाला नहीं वरन् जीवन के वास्तविक रहस्यों को प्रकटानेवाला और सदा सुखी रहने के काम आनेवाला है। जिस मनुष्य के पास आत्मविद्या नहीं है और धनबल, सत्ताबल एवं बाहुबल है, तो वह उस बल का क्या कर डाले, इसका कोई पता नहीं। सत्ता और धन का कैसा उपयोग करे इसका कोई पता नहीं। परंतु उसके जीवन में यदि योगविद्या और ब्रह्मविद्या भी साथ में हों तो...

भगवान श्रीराम के पास ये तीनों विद्याएँ थीं तो हजारों विघ्न-बाधाओं के बीच भी उनका जीवन बड़ा सुख, शांति व परमानंद से सम्पन्न बीता। भगवान श्रीकृष्ण के जीवन में भी ये तीनों विद्याएँ थीं। उनके जीवन में भी हजारों विघ्न-बाधाएँ आयीं लेकिन वे सदा मुस्कराते रहे, सदा आत्मानंद में, शाश्वत सुख में रमण करते रहे और दूसरों को भी कराते रहे।

जीवन में जितने अंश में योगविद्या और

ब्रह्मविद्या है उतने अंश में सांसारिक विद्या भी शोभा देती है। किंतु जिनके जीवन में केवल ऐहिक विद्या है, योगविद्या और ब्रह्मविद्या नहीं हैं उन्हें केवल सांसारिक विद्या के प्रमाणपत्र मिल जाते हैं। उनसे कुछ धन या सत्ता मिल जाती है किंतु गहराई से देखो तो भीतर खोखलापन ही रहता है, कोई तसल्ली या आत्मतृप्ति नहीं होती, कोई शांति नहीं होती। उनका भविष्य कैसा होगा ? कोई पता नहीं। उनसे पूछो : 'आत्मा क्या है ?' कोई पता नहीं। 'मोक्ष क्या है ?' कोई पता नहीं। उनका सम्पूर्ण जीवन आत्म-अज्ञान में ही बीत जाता है।

आत्मा-परमात्मा क्या है इसका हमें ज्ञान नहीं है इसलिए अज्ञानदशा में हम जो कुछ लौकिक शिक्षा पाते हैं वह भी अज्ञान के अन्तर्गत ही होती है। हकीकत में जानकारी मिलती है मन-बुद्धि को और हम समझते हैं कि हम जानते हैं। हम चिकित्सक, वकील या उद्योगपति हो गये तो भी हमारा ज्ञान केवल बुद्धि तक ही सीमित रहता है। इससे केवल नश्वर शरीर का ही पालन-पोषण होता है क्योंकि यह अपूर्ण ज्ञान है।

हम यदि प्रशासनिक अधिकारी बन जायें तो प्रशासन विद्या का ज्ञान तो हमें होगा, लेकिन चिकित्सा विद्या का अज्ञान रहेगा। हम यदि चिकित्सक हो गये तो प्रशासन अथवा अभियांत्रिकी विद्या का अज्ञान रहेगा। चिकित्सा, वकालत, अभियांत्रिकी या अन्य कोई भी लौकिक विद्या केवल बुद्धि तक ही सीमित है। चिकित्सकों में भी अलग-अलग अंगों के अलग-अलग विशेषज्ञ होते हैं। लेकिन सबकी बुद्धियों के पीछे जो एक सार सत्ता है, उसमें योग और आत्मविद्या के द्वारा प्रवेश पानेवाला सबके सार को, सबके तत्त्व को, सबके आधार को, सत्-चित्-आनंद परमात्मा को पाकर राजा जनक व सुलभा की नाईं स्वयं को, परिवार व सम्पर्क में आनेवालों को सच्चे सुख, शांति और आनंदमय जीवन की तरफ उन्नत करता है। जो आत्मविद्या से स्वयं उन्नत नहीं हुआ वह दूसरों को क्या खाक उन्नत करेगा ? आत्मविद्या तो अपनी आत्मा तक पहुँचती है, इसीलिए आत्मविद्या की आवश्यकता है।

हमने सुना है कि अष्टावक्र मुनि, ध्रुव पूर्वजन्म के योगी थे, मीरा भगवान श्रीकृष्ण की गोपियों में से एक, भगवान की भक्त थी। पूर्वजन्म के योगियों और भक्तों के बारे में तो बहुत सुना है लेकिन यह कभी सुनने में नहीं आया कि यह पूर्वजन्म का चिकित्सक या पीएच.डी. है। नये जन्म में सभीको क, ख, ग, घ से ही लौकिक विद्या की शुरुआत करनी पड़ती है लेकिन आत्मविद्या में ऐसा नहीं है। जिन्होंने आत्मतत्त्व का साक्षात्कार कर लिया वे तो मुक्त हो गये लेकिन जिनकी साधना अधूरी रह गयी है, उनकी साधना अगले जन्म में वहीं से शुरू होगी जहाँ से छूटी थी। इस पर मौत का भी प्रभाव नहीं पड़ता। यह विद्या दूसरे जन्म में भी हमारे काम आती है, इसीलिए इसे अमर विद्या भी कहते हैं।

जहाँ से विश्व की तमाम बुद्धियों को, दुनिया के बड़े-बड़े वैज्ञानिकों, ऋषि-मुनियों एवं साधु-संतों को दिव्य आत्मिक ज्ञान मिलता रहा है; चतुरों को चतुराई, विद्वानों को विद्या सँभालने की योग्यता, प्रेम, आनंद, साहस, निर्भयता, शक्ति, सफलता, इहलोक और परलोक के रहस्यों का उद्घाटन करने की क्षमता, ये सब जहाँ से मिलता आया है, मिल रहा है और मिलता रहेगा और इतना देने के बाद जिसमें एक तिनके जितनी भी कमी नहीं हुई उसे कहते हैं ब्रह्म-परमात्मा। ब्रह्म-परमात्मा को, आत्मा को जानने की विद्या को ही ब्रह्मविद्या कहते हैं। बुद्धि के पार की जो विद्या है वह है ब्रह्मविद्या।

जिसने एक बार भी इस ब्रह्मविद्या को जान लिया, उसे मरनेवाले शरीर में 'मैं' बुद्धि नहीं रहती, दुःख उसे चोट नहीं पहुँचा सकते, सुख आकर्षित नहीं कर सकते। जिसे वाणी बयान नहीं कर सकती उस परमात्म-पद में वह प्रतिष्ठित हो जाता है।

उद्यमः साहसं धैर्यं बुद्धिः शक्तिः पराक्रमः।
षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र देवः सहायकृत्॥

'उद्योग, साहस, धीरज, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम – ये छः गुण जिस व्यक्ति के जीवन में हैं, देव (परब्रह्म परमात्मा) उसकी सहायता करते हैं।'

विद्यार्थी प्रश्नोत्तरी

(१) ब्रह्ममुहूर्त में (सुबह ४-४.३० बजे) क्यों जागना चाहिए ?

उत्तर : इस समय शांत वातावरण, शुद्ध और शीतल वायु रहने के कारण मन में सात्त्विक विचार, उत्साह तथा शरीर में स्फूर्ति रहती है। विद्यार्थियों के लिए अध्ययन का यह सबसे अच्छा समय है।

जो जागत है सो पावत है। जो सोवत है सो खोवत है॥

(२) सूर्योदय के बाद भी सोते रहने से क्या हानि होती है ?

उत्तर : अथर्ववेद में बताया गया है कि जो व्यक्ति सूर्योदय के बाद भी सोता रहता है उसके ओज-तेज को सूर्य की किरणें पी जाती हैं।

(३) सुबह स्नान के बाद तुलसी के पत्ते क्यों खाने चाहिए ?

उत्तर : तुलसी को घर का वैद्य कहा गया है। वैज्ञानिकों ने प्रयोग करके जाना कि अन्य पौधों के मुकाबले तुलसी में ऑक्सीजन की मात्रा तिगुनी होती है। तुलसी के पत्तों के सेवन से बल, तेज और यादशक्ति बढ़ती है। इसमें कैंसर-विरोधी तत्त्व भी पाये जाते हैं। फ्रेंच डॉक्टर विक्टर रेसिन ने कहा है : 'तुलसी एक अद्‌भुत औषधि है।'

अतः सुबह स्नान के बाद खाली पेट तुलसी के ५-७ पत्ते खाकर थोड़ा पानी पीना चाहिए।

(४) ध्यान करने से क्या-क्या लाभ होते हैं ?

उत्तर : ध्यान करने से हमारी आंतरिक शक्तियाँ जाग्रत होती हैं। ध्यान से मन शांत, बुद्धि सूक्ष्म, एकाग्रता व स्मरणशक्ति का विकास तथा परम शांति का अनुभव होता है। **परमात्मा के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का सुगम साधन है ध्यान।**

(५) सूर्यनमस्कार क्यों करने चाहिए ?

उत्तर : प्राचीन काल में हमारे ऋषि-मुनियों ने मंत्र और व्यायाम सहित एक ऐसी आसन-प्रणाली विकसित की, जिसमें सूर्योपासना का भी समावेश है। इसे सूर्यनमस्कार कहते हैं। इसके नियमित अभ्यास से शारीरिक और मानसिक स्फूर्ति की वृद्धि के साथ विचारशक्ति और स्मरणशक्ति भी तीव्र होती है।

पश्चिमी वैज्ञानिक गार्डनर रोनी ने कहा है : 'सूर्य श्रेष्ठ औषधि है। सूर्य की किरणों के प्रभाव से सर्दी, खाँसी, न्यूमोनिया और कोढ़ जैसे रोग भी दूर हो जाते हैं।' डॉ. सोले कहते हैं : 'सूर्य में जितनी रोगनाशक शक्ति है, उतनी संसार की किसी अन्य चीज में नहीं है।'

(६) सूर्य को मंत्रसहित अर्घ्य देने से क्या लाभ होते हैं ?

उत्तर : सूर्य बुद्धिशक्ति के स्वामी हैं, अतः सूर्योदय के समय मंत्रोच्चार करते हुए उन्हें अर्घ्य देने से बुद्धि तीव्र बनती है तथा परावर्तित सूर्यकिरणें, हमारी श्रद्धा, मंत्र का सामर्थ्य और सूर्यदेव की कृपा - इन सबका लाभ हमें मिल जाता है। इस क्रिया से हमें स्वतः ही सूर्यकिरणयुक्त जल-चिकित्सा का फायदा मिलता है। बौद्धिक शक्ति में चमत्कारिक लाभ होता है, ओज, तेज में वृद्धि होती है। सभी प्रकार से मनुष्य के लिए कल्याणकारी, प्राचीन भारतीयों की यह खोज एक वैज्ञानिक उपचार भी सिद्ध हुई है।

(७) पाश्चात्य संगीत (रॉक म्यूजिक और पॉप म्यूजिक) सुनने से तथा उनके कार्यक्रम (पॉप एलबम आदि) देखने से क्या हानि होती है ?

उत्तर : ये हृदय के शुद्ध भावों को कुण्ठित करके मन, बुद्धि को विकार तथा बुरे विचारों से भर देते हैं। डॉ. डायमण्ड ने प्रयोग द्वारा यह निष्कर्ष निकाला कि ऐसे संगीत से जीवनशक्ति का अत्यधिक ह्रास होता है।

प्रयोग : सामान्यतया स्वस्थ व्यक्ति के हाथ का एक स्नायु (डेल्टोइड) ४० से ४५ कि.ग्रा. वजन उठा सकता है। जब मनुष्य रॉक म्यूजिक सुनता है तब उसकी क्षमता घटकर केवल १० से १५ कि.ग्रा. वजन उठाने की रह जाती है। इस प्रकार पाश्चात्य संगीत से जीवनशक्ति का ह्रास होता है।

(८) भारतीय संस्कृति का स्वस्तिक चिह्न शुभ क्यों माना जाता है ?

उत्तर : यह आकृति हमारे ऋषि-मुनियों ने कई सूक्ष्म अनुसंधानों के बाद निर्मित की है। एकमेव और अद्वितीय ब्रह्म विश्वरूप में फैला है, यह बात स्वस्तिक की खड़ी और आड़ी रेखाएँ स्पष्ट रूप से बताती हैं। स्वस्तिक की खड़ी रेखा ज्योतिर्लिंग का सूचन करती है और आड़ी रेखा विश्व का विस्तार बताती है। स्वस्तिक की चार भुजाएँ यानि भगवान श्रीविष्णु के चार हाथ। भगवान श्रीविष्णु अपने चार हाथों से चारों दिशाओं का पालन करते हैं।

स्वस्तिक की आकृति सर्वांगी मंगलमय भावना का प्रतीक है। अपनी भारतीय संस्कृति की परम्परा के अनुसार विवाह-प्रसंगों, नवजात शिशु की छठी, दीपावली, पुस्तक-पूजन तथा अन्य शुभ प्रसंगों में घरों एवं मंदिरों के प्रवेश-द्वार पर कुमकुम से स्वस्तिक का चिह्न बनाया जाता है। प्रयोगों द्वारा सिद्ध हुआ है कि 'ॐ' तथा 'स्वस्तिक' देखने से जीवनशक्ति का विकास होता है।

(९) माता, पिता और गुरुजनों को प्रणाम करने से क्या लाभ होते हैं ?

उत्तर :

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम् ॥

'बड़ों को नित्य प्रणाम करनेवाले सदाचारी व्यक्ति की चार चीजें बढ़ती हैं : आयु, विद्या, यश और बल।'

** 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के सभी सेवादारों तथा सदस्यों को सूचित किया जाता है कि 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका की सदस्यता के नवीनीकरण के समय पुराना सदस्यक्रमांक/रसीदक्रमांक एवं सदस्यता 'पुरानी' है - ऐसा लिखना अनिवार्य है। जिसकी रसीद में ये नहीं लिखे होंगे, उस सदस्य को नया सदस्य माना जायेगा।*

** नये सदस्यों को सदस्यता के अंतर्गत वर्तमान अंक के अभाव में उसके बदले एक पूर्व प्रकाशित अंक भेजा जायेगा।*

प्रिय पाठको !

आपको इस पत्रिका से होनेवाले लौकिक और आध्यात्मिक लाभ तथा आपकी इसके प्रति रुचि के फलस्वरूप आज सुखी, स्वस्थ और सम्मानित जीवन की माँग पूरी करनेवाली 'ऋषि प्रसाद' भारत की सर्वाधिक लोकप्रिय आध्यात्मिक पत्रिका बन गयी है। इस सफलता में आपके साथ-साथ 'ऋषि प्रसाद' के कर्मठ सेवादारों का भी अद्वितीय योगदान है, जिन्होंने आप सब तक यह पत्रिका पहुँचाने में अनेकों तितिक्षाएँ सही हैं।

'ऋषि प्रसाद' को जन-जन तक पहुँचाने के लिए 'घर-घर अलख जगाओ' सदस्यता अभियान शुरु किया गया है। क्या आप सब घर बैठे इस पुनीत कार्य में सहभागी होकर पुण्यभागी नहीं बनना चाहेंगे ?

यदि हाँ ! तो निम्नलिखित क्षेत्रिय 'ऋषि प्रसाद कार्यालय' से सम्पर्क कीजिये।

अमदावाद : ७५०५०१०, ११. **सूरत** : २७७२२०१, ०२, ०३. **बड़ौदा** : २३६३४३३, २६८०८४४. **नयी दिल्ली** : २५८६३५३२, २५७२९३३८. **मुंबई** : २८७७९०३१. **उल्हासनगर** : २५६३८८१. **नासिक** : २३४५४४०, २३४२३४०. **पूना** : ६०५००४३. **नागपुर** : २६६७२६७, ६८. **औरंगाबाद** : २३३६८७२, २४००९९९. **सोलापुर** : २६०६०४०. **अमरावती** : २६७९००२. **प्रकाशा** : (०२५६५) २४०२७५, २४०४४९. **बनारस** : २२१३७८१. **कानपुर** : २२१५६२५, २३००४४६. **लखनऊ** : २३८२७१२. **आगरा** : २६४१७७०, २६४२०१६. **बरेली** : २४२८२१३, २४२१३३९. **भोपाल** : २७४२५००. **इन्दौर** : २४७८०३१, २४६११९८. **ग्वालियर** : २३३५८८८. **छिंदवाड़ा** : २४७५७७. **कोटा** : २३२४१८१. **जोधपुर** : २५४८१४२, २५१०६१५. **उदयपुर** : २६५५६१२. **लुधियाना** : २८४५८७५, २८४५४७३. **चण्डीगढ** : ५४०२४०. **रायपुर** : २५३६३५६, २५३७४४७, २२२७३२३. **बिलासपुर (छत्तीसगढ़)** : ५०४०१८, ५०४८०१. **जमशेदपुर** : २४३२२५७, २४२२३८४. **कोलकाता** : २३२१३००२, २३२१७३८८. **अनगुल** : २३०५२१, २३११०८. **राउरकेला** : ४६००३५५, ४५०४७२८. **हैदराबाद** : (०८४१३) २२२७५७, २२२१०३.

प्राचीन शिक्षापद्धति और वर्तमान !

* संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से *

प्राचीन काल में भारत की शिक्षाप्रणाली ऐसी थी कि विद्यार्थी पाँच साल की उम्र में गुरुकुल में प्रवेश पाता और वहाँ पन्द्रह साल तक उसको ऐसे दृढ़ संस्कार दिये जाते कि वह संयमी और सादा जीवन बिताकर ऐसी शक्तियों का विकास करता कि इहलोक और परलोक में प्रभुत्व जमा दे। गुरुकुल में ऐसे विद्यार्थी तैयार होते थे कि देवताओं को भी युद्ध में उनकी सहाय लेनी पड़ती थी । जैसे, देवताओं ने दैत्यों के साथ युद्ध में राजा खट्वांग की, रघुराजा की सहायता ली थी।

अंग्रेज शासन आया और वे भारतीयों को अपने नियंत्रण में लाने के लिए उपाय आजमाने लगे लेकिन सफल नहीं हो रहे थे । तब लॉर्ड मैकाले ने अंग्रेज सरकार को सलाह दी कि 'जब तक भारतीय संस्कृति के संस्कारों का उन्मूलन नहीं किया जायेगा और इन्हें पाश्चात्य पद्धति का अभ्यास नहीं कराया जायेगा, तब तक इन लोगों को हम स्थायी गुलाम नहीं बना सकेंगे।'

लार्ड मैकाले की सलाह से अंग्रेज सरकार ने हमारे भारतीय विद्यार्थियों और युवानों के मन में विपरीत विचार डालने का काम शुरू किया। फलतः हमारी संस्कृति के गर्भ में जो संयम, सादगी और निष्ठा थी, युवानों में जो ओज और तेज था वह सब अस्त-व्यस्त हो गया।

लोग कहते हैं कि 'यह विकास का युग है।' अच्छा भाई ! बाहरी साधनों के लिए हम इसे विकास का युग भले ही मान लें, लेकिन विद्यार्थियों के लिए तो यह युग बिल्कुल विनाश का युग है। विद्यार्थियों के साथ इस युग में जितना अन्याय हो रहा है ऐसा पहले कभी नहीं हुआ। पहले विद्यार्थियों को गाय का दूध पीने को मिलता था, उसके बदले अभी चाय और कॉफी मिलती है। इनसे यौवन की सुरक्षा नहीं बल्कि विनाश होता है, यादशक्ति कमजोर हो जाती है।

प्राचीन समय में विद्यार्थी को जीवन में साहस, बल और तेज का विकास करने की जो दीक्षा मिलती थी, जो ऋषियों की पद्धति थी वह सब अस्त-व्यस्त हो गयी। अभी तो -

मैं भी रानी तू भी रानी। कौन भरेगा घर का पानी ?

आवश्यकताएँ बढ़ गयीं, दिखावा बढ़ गया और जीवन भीतर से खोखला हो गया। विद्यार्थी के जीवन में जो संयम होना चाहिए, तेजस्विता होनी चाहिए, स्मरणशक्ति का अद्भुत विकास होना चाहिए, शरीर की सुदृढ़ता होनी चाहिए वह सब आज नहीं है।

आज चारों ओर भाषणों की भरमार है कि 'चोरी मत करो, शराब मत पियो, बुरी आदतों का त्याग करो, नकल न करो, दिल लगाकर अभ्यास करो...' लेकिन नकल न करके ध्यान देकर पढ़ने की जो युक्ति है, जो पद्धति है वह हम सब भूल गये हैं। फिर विद्यार्थी बेचारा क्या करे ? नकल करके, कैसे भी करके परीक्षा में पास हो जाता है। लेकिन जीवन में जो ओज, बल और स्वावलंबन होना चाहिए, शरीर सुगठित होना चाहिए वह प्रायः विद्यार्थियों के जीवन में दिखाई नहीं देता।

संयमी और साहसी जीवन जीने की हमारी भारतीय परम्परा है। पन्द्रह साल की उम्र तक बालक में साहस और संयम के जितने भी संस्कार डाले जायेंगे, बड़ा होकर वह महाविद्यालय में उतना ही प्रखर बुद्धिमान, स्वावलंबी और साहसी सिद्ध होगा और भविष्य में भी श्रेष्ठ नागरिक बन सकेगा।

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक-पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य १२७वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया मई २००३ के अंत तक अपना नया पता भेज दें।

सृजनात्मक दिशा

हमारे शरीर का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग है मस्तिष्क। इसमें दो महत्त्वपूर्ण अन्तःस्रावी ग्रंथियाँ हैं - पीनियल ग्रंथि तथा पीयूष ग्रंथि।

पीनियल ग्रंथि भ्रूमध्य में अवस्थित होती है। योग में इस ग्रंथि का सम्बन्ध **आज्ञाचक्र** से है। यह ग्रंथि बच्चों में बहुत क्रियाशील होती है किंतु ८-९ वर्ष की उम्र के बाद इसका ह्रास प्रारम्भ होता है और पीयूष ग्रंथि अधिक सक्रिय हो जाती है। इससे बच्चों के मनोभाव तीव्र हो जाते हैं। यही कारण है जिससे कई बच्चे भावनात्मक रूप से असंतुलित हो जाते हैं और किशोरावस्था में या किशोरावस्था प्राप्त होते ही व्याकुल हो जाते हैं तथा न करने जैसे काम कर बैठते हैं। पीनियल ग्रंथि के विकास तथा उसके क्षय में विलंब हेतु तथा पीयूष ग्रंथि के नियंत्रण हेतु ७-८ वर्ष की उम्र से बालकों में आसन, प्राणायाम, मुद्रा आदि के अभ्यास के संस्कार डालना आवश्यक है। हमारे ऋषियों ने इनको अत्यंत महत्त्वपूर्ण बताया है।

ज्ञानमुद्रा : हमारे दोनों अँगूठों के अग्रभाग में मस्तिष्क, पीयूष ग्रंथि और पीनियल ग्रंथि से सम्बन्धित तीन मुख्य बिन्दु हैं। इन बिन्दुओं पर दबाव डाला जाय तो मस्तिष्क में चुंबकीय प्रवाह बहने लगता है जो कि मस्तिष्क तथा पीनियल ग्रंथि को अधिक क्रियाशील बनाता है। इससे स्मरणशक्ति, एकाग्रता व विचारशक्ति का विकास होता है। जब हम ज्ञानमुद्रा में बैठते हैं तब अँगूठे के इसी भाग पर तर्जनी का दबाव पड़ता है और उपर्युक्त सभी लाभ हमें सहज में ही मिल जाते हैं।

जप : माला पर भगवन्नाम-जप करने अँगूठे और अनामिका से माला पकड़कर मध्यम से घुमाने पर हर मनके का घर्षण उन्हीं बिन्दुओं पर होता है।

कीर्तन : कीर्तन में दोनों हाथों से ताली बजाने पर हाथों के सभी एक्युप्रेशर बिन्दुओं पर दबाव पड़ता है और हमारे शरीर के समस्त अवयव बैटरी की तरह ऊर्जासम्पन्न (रिचार्ज) होकर क्रियाशील हो उठते हैं। अन्तःस्रावी ग्रंथियाँ भी ठीक से कार्य करने लगती हैं, रोगप्रतिकारक शक्ति बढ़ जाती है तथा रोग होने की संभावना कम हो जाती है। बालकों द्वारा एक साथ मिलकर प्रभु-वंदन और संकीर्तन करने में एक स्वर से उठी हुई तुमुल ध्वनियाँ वातावरण में पवित्र लहरें उत्पन्न करने में समर्थ होती हैं तथा इस समय मन ध्वनि पर एकाग्र होता है, जिससे स्मरणशक्ति तथा श्रवणशक्ति विकसित होती है। इसीलिए विद्यालयों में सम्मिलित भगवत्प्रार्थना को महत्त्वपूर्ण माना गया है।

आज्ञाचक्र पर ध्यान : ज्ञानमुद्रा में पद्मासन अथवा सुखासन में बैठकर आज्ञाचक्र पर अपने इष्टदेव अथवा गुरुदेव का ध्यान करने का भी यही महत्त्व है। एकाग्रता अथवा ध्यान मन के उपद्रवों तथा चंचलताओं को समाप्त करने और उसकी शक्तियों को सृजनात्मक दिशा प्रदान करने में बड़ा सहायक होता है। ध्यान के द्वारा बुद्धि-गुणांक (I.Q.) का चमत्कारिक ढंग से विकास होता है। यह प्रयोगसिद्ध वैज्ञानिक तथ्य है।

सेवाधारियों व सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनी ऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें। (२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जायेगी।

भारतीय संस्कृति की गरिमा को भूलता आज का युवावर्ग

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

सनातन भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम और सर्वश्रेष्ठ संस्कृति है । इसकी महानता को विश्व के सभी विद्वानों ने स्वीकार किया है । फ्रेंच विद्वान केनो का कहना है : 'विश्वभर में केवल भारत के पास ही ऐसी उत्कृष्ट परम्पराएँ हैं, जो सदियों से जीवंत रही हैं ।'

जर्मनी व जापान के लोगों की प्रगति का मुख्य कारण है - भारत के वेदों और उपनिषदों के ज्ञान को उनके द्वारा अपनाया जाना ! लेकिन बड़े दुर्भाग्य की बात है कि आधुनिकता के नाम पर हम अपने ही देश में अपनी पावन संस्कृति के उच्च आदर्शों को भूलते जा रहे हैं, शीर्ष रीति-रिवाजों, आचार-परम्पराओं का त्याग करते जा रहे हैं ।

भारतीय संस्कृति में मानव-जीवन को समुन्नत बनानेवाली सब युक्तियाँ होने पर भी हमारे युवक-युवतियाँ पाश्चात्य पद्धतियों और साधनों से आकर्षित हो रहे हैं । क्योंकि इन्द्रियों को भड़कानेवाले दृश्यों और साधनों का प्रचार बड़ी मात्रा में व तेजी से हो रहा है ।

बड़े खेद की बात है कि हम विदेशी सभ्यता के आकर्षण-जाल में बुरी तरह से फँस रहे हैं । मैकाले शिक्षा-पद्धति के द्वारा कुप्रचार के कारण हमने इस आध्यात्मिकता के केन्द्रबिन्दु को गँवारों की, अशिक्षितों की और संकुचित मानसिकता की निशानी मानकर फैशन के प्रभाव में इसके महत्त्व को ही भुला दिया है और उनसे प्रभावित हो गये हैं, जो शराब, कबाब आदि आसुरी खुराक का सेवन करते हुए स्वार्थपूर्ति में लिप्त हैं और भोग व अशांति की आग में पच रहे हैं ।

खड़े-खड़े भोजन करने, पानी आदि पेय पीने की पाश्चात्य पद्धति के कारण ४० वर्ष से अधिक उम्र होने पर पैर की पिंडलियों में पीड़ा चालू हो जाती है ।

जो लोग शराब-कबाब, अण्डे आदि का सेवन कर ऐहिक विद्या के क्षेत्र में खोज करते हैं, उनकी पुस्तकें पढ़ने का समय महाविद्यालय के विद्यार्थियों के पास है लेकिन जिन ऋषि-मुनियों ने कन्दमूल खाकर अथवा वायु पीकर जीवनयापन करते हुए जीवन के परम सत्य की खोज की तथा समाज-हित के लिए तप किया, न दिन देखा न रात देखी उन महापुरुषों द्वारा रचित 'श्री योगवाशिष्ठ महारामायण', 'गीता', उपनिषद् आदि शास्त्रों के अध्ययन के लिए भारत के विद्यार्थियों के पास समय ही नहीं है । विश्व के सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ 'गीता' के तत्त्वचिन्तन के लिए समय नहीं है । यह कितने दुर्भाग्य की बात है !

हमारा इहलोक व परलोक सुधर जाय, जीवन उन्नत हो तथा हमारे सम्पर्क में आनेवाले लोग भी आनंदित हों, ऐसा दिव्य ज्ञान प्रदान करनेवाले उपनिषदों की रचना जिन ऋषियों ने की उनके दिव्य ज्ञान से हम दूर होते जा रहे हैं ।

यदि भारत में पुनः सामाजिक सुव्यवस्था लानी है तथा भारतवासियों की आत्मिक शक्ति जगानी है तो हमें संयम, साधना का सहारा लेना ही होगा ।

भारतवासियों का तन स्वस्थ रहे, मन प्रसन्न रहे तथा उन्हें दीर्घ जीवन जीने की कला मिले इसके लिए हमें सत्शास्त्रों व संतों का मार्गदर्शन लेकर अपनी संस्कृति के पावन संस्कारों और ऋषि-मुनियों की गौरवशाली आध्यात्मिक परम्पराओं का अपने भीतर पुनः बीजारोपण करना होगा । तभी भारत के युवाओं की बौद्धिक क्षमता और सामर्थ्य का विकास होगा और वे गौरव के पथ पर आगे बढ़ सकेंगे ।

✲

स्वभाषा का प्रयोग करें

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

मैं तो जापानियों को धन्यवाद दूँगा। वे अमेरिका में जाते हैं तो वहाँ भी अपनी मातृभाषा में ही बातें करते हैं। ...और हम भारतवासी ! भारत में रहते हैं फिर भी अपनी हिन्दी, गुजराती आदि भाषाओं में अंग्रेजी के शब्द बोलने लगते हैं। आदत जो पड़ गयी है। आजादी मिले ५५ वर्ष से भी अधिक समय हो गया, बाहरी गुलामी की जंजीर तो छूटी लेकिन भीतरी गुलामी, दिमागी गुलामी अभी तक नहीं गयी।

लॉर्ड मैकाले ने कहा था : 'मैं यहाँ की शिक्षा-पद्धति में ऐसे कुछ संस्कार डाल जाता हूँ कि आनेवाले वर्षों में भारतवासी अपनी ही संस्कृति से घृणा करेंगे... मंदिर में जाना पसंद नहीं करेंगे... माता-पिता को प्रणाम करने में तौहीन महसूस करेंगे... वे शरीर से तो भारतीय होंगे लेकिन दिलो-दिमाग से हमारे ही गुलाम होंगे...'

हमारी शिक्षा-पद्धति में उसके द्वारा डाले गये संस्कारों का प्रभाव आज स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहा है।

मार्गरेट नोबल आयरलैण्ड की एक महिला थी जो बाद में स्वामी विवेकानंद की शिष्या बनी और भगिनी निवेदिता के नाम से प्रसिद्ध हुई।

एक बार मिदनापुर में स्वामीजी का प्रवचन चल रहा था। सब श्रोता मंत्रमुग्ध होकर प्रवचन सुन रहे थे। स्वामीजी की किसी पंक्ति पर कुछ युवकों ने हर्ष से 'हिप-हिप हुर्रे...' का उद्घोष किया।

इस पर स्वामीजी ने प्रवचन बीच में ही रोककर उन्हें डाँटते हुए कहा : 'चुप रहो ! लज्जा आनी चाहिए तुम्हें ! क्या तुम्हें अपनी भाषा का तनिक भी गर्व नहीं ? क्या तुम्हारे पिता अंग्रेज थे ? क्[या] तुम्हारी माँ गोरी चमड़ी की यूरोपियन महिला थी[?] अंग्रेजों की नकल क्या तुम्हें शोभा देती है ?'

यह सुनकर युवक स्तब्ध रह गये। सबके सि[र] शर्म से झुक गये। फिर भगिनी निवेदिता ने कहा 'प्रवचन की कोई बात अच्छी लगे तो स्वभाषा में बोल[ा] करो : सच्चिदानंद परमात्मा की जय... भारत मात[ा] की जय... सद्गुरुदेव की जय...' युवकों ने तत्काल भगिनी निवेदिता के इस निर्देश का पालन किया।

भारत में प्राचीन काल से ही प्रसन्नता के ऐसे अवसरों पर 'साधो-साधो' कहने की प्रथा थी जो पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण से आज लुप्त हो गयी है। हम अंग्रेजों की गुलामी से तो मुक्त हुए, पर अंग्रेजी के गुलाम हो गये।

अतः स्वतंत्र भारत के परतंत्र नागरिकों से प्रार्थना है कि वे भगिनी निवेदिता के इन वचनों को याद रखें। स्वभाषा में अंग्रेजी मिलाकर अपनी भाषा का गला न घोंटें। आप भी सतर्क रहें और दूसरों तक भी यह प्रार्थना पहुँचायें।

गीता प्रश्नोत्तरी

३१. ईश्वर का भजन कितने प्रकार के लोग करते हैं?
३२. ब्रह्मा के दिन का क्या परिमाप है ?
३३. सूर्य उत्तरायण में कितने दिन तक रहता है ?
३४. किस पक्ष में मृत्यु होने पर पुनः आवृत्ति नहीं होती?
३५. गीता के अनुसार ब्रह्मभाव के कितने महर्षि उत्पन्न हुए ?
३६. गीता के अनुसार वेदों में कौन-सा वेद सर्वश्रेष्ठ है?
३७. गीता में रुद्रों में से किसे श्रेष्ठ माना गया है ?
३८. गीता में पर्वतों में किसे श्रेष्ठ माना गया है ?
३९. गीता में गजों (हाथियों) में किसे श्रेष्ठ माना गया है?
४०. सृष्टि की सारी विभूतियाँ किस रूप में उत्पन्न हुईं ?

पिछले अंक के प्रश्नों के उत्तर : २१. पांचजन्य २२. धृष्टद्युम्न ने २३. श्वेत २४. नौ २५. गाण्डीव २६. अनन्तविजय २७. कर्मयोग २८. ब्रह्म से २९. काम एवं क्रोध से ३०. आत्मशुद्धि से।

※ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ※

भगवान को न मानने से हानि

दो तरीकों से विकार अंदर घुसते हैं :

१. **आँखों से** : कोइ चलचित्र देखा, किसी जवान लड़के या लड़की ने एक-दूसरे को विकारी नजर से देखा अथवा किसी खाने-पीने की चीज को देखा तो मुँह में पानी आ गया...

२. **कानों से** : किसीकी बुराई या प्रशंसा सुनी, कोई अश्लील गाना-बजाना सुना।

संसार की कल्पित अच्छाई-बुराई आँख-कान से मन में घुसती है। असली अच्छाई हम जानते नहीं हैं। असली अच्छाई तो भगवान के स्वरूप में है। भगवान निर्गुण-निराकार भी हैं और सगुण-साकार भी।

भगवान को समझ पाने के लिए हम सर्वत्र मंगलमय दृष्टि रखें, सबको भगवद्भाव से देखें। भगवान की मूर्ति के दर्शन और भगवान को पाये हुए महापुरुषों के दर्शन से तथा भगवन्नाम-कीर्तन से हमारी अच्छाई का हिस्सा बढ़ता जाता है, ताकि परम अच्छे परमात्मा तक हमारी यात्रा हो जाय।

भगवान को न मानने से क्या होता है ?

जिनके जीवन में संत और सत्संग नहीं हैं, उनका मन ज्यादा विकारी होगा। जिस नगर अथवा गाँव में पिछले ५-१५ साल से किसी संत-महात्मा का आना-जाना नहीं हुआ, उस नगर अथवा गाँव के लोगों का खान-पान, व्यवहार पिशाच जैसा हो जाता है, जीवन में उद्दंडता और अशांति बढ़ जाती है।

भगवान को नहीं मानेंगे तो व्यर्थ का अहंकार और हेकड़ी (उग्रता) बढ़ेगी जो पाप और कलह का मूल है। भगवान को नहीं मानेंगे तो हमारा अंतःकरण निर्मल नहीं होगा, सुख-दुःख में समता का सद्गुण नहीं आयेगा। फिर जरा-से सुख में फूल जायेंगे और जरा-से दुःख में घबरा जायेंगे, सिकुड़ जायेंगे।

जापान में एक बार ऐसी हवा चली कि 'भगवान को मानने से कोई फायदा नहीं। मंदिर-चर्च सब बंद करने चाहिए। यदि हमारा राज आये तो ये सब ढोंग-पाखंड बंद कर देंगे।'

ऐसे लोगों को सत्ता मिल गयी तो उन्होंने मंदिर और गिरिजाघरों के पुजारियों-पादरियों को व्यवस्थापक और दूसरों को मजदूर बना दिया। सारे मंदिरों और गिरिजाघरों को छोटे-बड़े कारखानों में बदल दिया गया ताकि उत्पादन दुगना हो जाय और देश की उन्नति हो।

साल के अंत में पाया गया कि हर साल जितना उत्पादन होता था इस साल उससे भी आधा हो गया! जाँच कमेटी बिठायी गयी कि 'पहले से दुगने कारखाने हो गये, लोग भी बढ़ गये फिर भी उत्पादन आधा क्यों हुआ ?'

पता चला कि लोग पहले भगवान को मानते थे, मंदिरों में जाते थे तो उन्हें थोड़ी शांति मिलती थी। अच्छा काम होता था तो बोलते थे कि 'भगवान की कृपा से हुआ।' अहंकार कम रहता था। आदमी में सुहृदता रहती थी। अगर आदमी बीमार हो जाय या शल्यक्रिया असफल हो जाय तो चिकित्सक बोलते थे कि 'जैसी भगवान की मर्जी !'

अब भगवान हट गये जिससे सांत्वना का, शांति का अभाव हो गया। इससे मानव का आचरण असुर जैसा हो गया।

झख मारकर जापानियों को फिर से पूजा-स्थल चालू करने पड़े। ...और आज भारतीय वैदिक संस्कृति का प्रसाद अपने जीवन में लाकर जापानी कितने उन्नत हो गये हैं! अब वे ध्यान भी करते हैं, भगवान को भी मानते हैं।

भगवान को मानने से सांत्वना, शांति मिलती है तथा देर-सवेर भगवान का पथ मिलता है और भगवान को पाकर मनुष्य मुक्त हो जाता है।

भगवान कैसे मिलते हैं ?

भगवान को पाने की इच्छा बढ़ जाय। भगवान

के नाम का जप करें, एकांत में साधना, प्रार्थना व अनुष्ठान करें, भगवज्जनों का संग करें, माता-पिता की सेवा करें, संत की सेवा और सत्संग करें तो भगवान शीघ्र ही मिलते हैं।

*

पुराणों में नाम-महिमा

'नारद भक्तिसूत्र' में कहा गया है कि 'कीर्तन करने से भगवद्भाव प्रकट होता है।'

'विष्णु पुराण' के छठे स्कंध के ८वें अध्याय के २०वें श्लोक में आता है : 'जैसे अग्नि से धातु पिघल जाती है, उसका मल निकल जाता है, ऐसे ही भगवन्नाम-जप से पापवासना का मल नष्ट हो जाता है।'

'अग्नि पुराण' में आता है कि 'अर्थसहित भगवन्नाम के जप से वह दुर्लभ गति प्राप्त होती है जो महात्माओं को प्राप्त होती है।'

'स्कंद पुराण' में आता है कि 'मानसिक जप से कायिक, वाचिक और मानसिक पाप नष्ट होते हैं।'

'बृहन्नारदीय पुराण' में लिखा है कि 'जहाँ जप-कीर्तन-नृत्य होता है, वह धरती अपने को पवित्र मानती है, तृप्ति का अनुभव करती है।'

अभ्यास क्या है ? अभ्यास का अर्थ है दुहराना। बचपन से जो अभ्यास डाल दिया जाता है, वह सदा के लिए रह जाता है। अभी से अपने दैनिक जीवन में, व्यवहार में शास्त्रों के अध्ययन का, दीन-दुःखी की सहाय करने का, संत-महात्मा-सद्गुरु की सेवा करने का, स्वधर्म-पालन एवं सत्-सिद्धान्तों के आचरण का, सत्कार्य करने का, जीवन-निर्माण में उपयोगी सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार का अभ्यास डालो। इससे मन कुचिन्तन से बचकर सच्चिन्तन में लगेगा। ध्यान, जप, कीर्तन और शास्त्राध्ययन का तो नियम ही बना लो। इससे अपने दुर्गुण व दुर्विचारों को कुचलकर साधन-सम्पन्न होने में बहुत अच्छी सहायता मिलती है। (आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'प्रसाद' से)

माँ सीता की सतीत्व-भावना

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

भगवान श्रीराम के वियोग तथा रावण और राक्षसियों के द्वारा किये जानेवाले अत्याचारों के कारण माँ सीता अशोक वाटिका में बड़ी दुःखी थीं। न तो वे भोजन करतीं न ही नींद। दिन-रात केवल श्रीराम-नाम के जप में ही तल्लीन रहतीं। उनका विषादग्रस्त मुखमंडल देखकर हनुमानजी ने पर्वताकार शरीर धारण करके उनसे कहा :

''माँ ! आपकी कृपा से मेरे पास इतना बल है कि मैं पर्वत, वन, महल और रावणसहित पूरी लंका को उठाकर ले जा सकता हूँ। आप कृपा करके मेरे साथ चलें और भगवान श्रीराम व लक्ष्मण का शोक दूर करके स्वयं भी इस भयानक दुःख से मुक्ति पा लें।''

भगवान श्रीराम में ही एकनिष्ठ रहनेवाली जनकनंदिनी माँ सीता ने हनुमानजी से कहा :

''हे महाकपि ! मैं तुम्हारी शक्ति और पराक्रम को जानती हूँ, साथ ही तुम्हारे हृदय के शुद्ध भाव एवं तुम्हारी स्वामीभक्ति को भी जानती हूँ। किंतु मैं तुम्हारे साथ नहीं आ सकती। पतिपरायणता की दृष्टि से मैं एकमात्र भगवान श्रीराम के सिवाय किसी परपुरुष का स्पर्श नहीं कर सकती। जब रावण ने मेरा हरण किया था तब मैं असमर्थ, असहाय और विवश थी। वह मुझे बलपूर्वक उठा लाया था। किंतु अभी मैं तुम्हारे साथ नहीं आ सकती। अब तो करुणानिधान भगवान श्रीराम ही स्वयं आकर, रावण का वध करके मुझे यहाँ से ले जायेंगे।''

*

अर्जुन पर विशेष कृपा क्यों ?

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

द्रोणाचार्य के कुछ शिष्य सोचते थे कि अर्जुन पर गुरुजी की विशेष कृपा है। उन सभीको अर्जुन खटकता था। एक बार द्रोणाचार्य अर्जुनसहित अपने शिष्यों को लेकर नदी किनारे गये और एक वटवृक्ष के नीचे खड़े होकर बोले : ''बेटा अर्जुन ! मैं आश्रम में अपनी धोती भूल आया हूँ। जा, जरा ले आ।''

अर्जुन चला गया। गुरु द्रोणाचार्य ने दूसरे शिष्यों से कहा :

''बाहर के धनुष और गदा में तो शक्ति है, लेकिन मंत्र में इनसे अनंत गुनी शक्तियाँ होती हैं। मंत्र-जापक उसका माहात्म्य और विधि समझ ले तो मंत्रों में बहुत ताकत है। मैं मंत्र से अभिमंत्रित एक ही बाण से इस वटवृक्ष के सारे पत्तों को छेद सकता हूँ।''

ऐसा कहकर द्रोणाचार्य ने धरती पर एक मंत्र लिखा। एक तीर को इस मंत्र से अभिमंत्रित किया और छोड़ दिया। बाण एक-एक पत्ते को छेद करता हुआ गया। सभी शिष्य आश्चर्यचकित हो गये।

बाद में गुरु द्रोणाचार्य और सब शिष्य नहाने चले गये। इतने में अर्जुन लौट आया। उसकी दृष्टि पेड़ के पत्तों की ओर गयी। वह सोचने लगा कि 'इस वटवृक्ष के पत्तों में पहले तो छेद नहीं थे। मैं सेवा के लिए गया तब गुरुजी ने इन शिष्यों को कोई रहस्य बताया है। रहस्य बताया है तो उसका कोई सूत्र भी होगा, शुरुआत भी होगी और कोई चिह्न भी होगा।' अर्जुन ने इधर-उधर देखा तो धरती पर एक मंत्र के साथ लिखा था : 'वृक्षछेदन के सामर्थ्यवाला यह मंत्र अद्‌भुत है।' उसने वह मंत्र पढ़ा, धारणा की और दृढ़निश्चय किया कि 'मेरा यह मंत्र अवश्य सफल होगा।' अर्जुन ने तीर उठाया और मंत्र पढ़कर छोड़ दिया। वटवृक्ष के पत्तों में एक-एक छेद तो था ही, दूसरा छेद भी हो गया। अर्जुन को प्रसन्नता हुई कि 'गुरुजी ने उन सबको जो विद्या सिखायी वह मैंने भी पा ली।'

नहाकर आने पर सबने देखा कि पहले तो वृक्ष के पत्तों में एक-एक छेद था, अब दूसरा किसने किया ?

द्रोणाचार्य ने पूछा : ''दूसरा छेद तुम लोगों में से किसीने किया है ?''

सबने कहा : ''नहीं।''

द्रोणाचार्य ने अर्जुन से पूछा : ''क्या तुमने किया है ?''

अर्जुन थोड़ा डर गया किंतु झूठ कैसे बोलता। उसने कहा : ''मैंने आपकी आज्ञा के बिना आपके मंत्र का प्रयोग इसलिए किया कि आपने इन सबको तो यह विद्या सिखा ही दी है, फिर आपसे पूछकर मैं अकेला आपका समय खराब न करूँ, इतना खुद ही सीख लूँ। गुरुजी ! गलती हो गयी हो तो माफ करना।''

द्रोणाचार्य : ''नहीं, अर्जुन ! तुममें जिज्ञासा है, संयम है, सीखने की तड़प है और मंत्र पर तुम्हें विश्वास है। मंत्रशक्ति का प्रभाव देखकर ये सब तो केवल आश्चर्य करके नहाने चले गये। इनमें से किसीने भी दूसरा छेद करने का सोचा ही नहीं। तुमने हिम्मत की, प्रयत्न किया और सफल भी हुए। तुम मेरे सत्पात्र शिष्य हो। अर्जुन ! तुमसे बढ़कर दूसरा धनुर्धर होना मुश्किल है।''

शिष्य ऐसा जिज्ञासु हो कि गुरु का दिल छलक पड़े...

जिसके जीवन में जिज्ञासा है, तड़प है और पुरुषार्थ है वह जिस क्षेत्र में चाहे, सफल हो सकता है। सफलता उद्यमियों का ही वरण करती है।

> शिष्य जब गुरु के पास रहकर अभ्यास करता हो तब उसके कान श्रवण के लिए तत्पर होने चाहिए। वह जब गुरु की सेवा करता हो तब उसकी दृष्टि सावधान होनी चाहिए।

बिना दवा स्मरणशक्ति का विकास

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

परब्रह्म परमात्मा में सोलह कलाएँ होती हैं । सृष्टि में स्थित प्रत्येक वस्तु तथा जीव में उन सोलह कलाओं में से कुछ कलाएँ होती ही हैं । अलग-अलग वस्तुओं तथा जीवों में ईश्वर की अलग-अलग कलाएँ विकसित होती हैं । उन कलाओं में एक विशेष कला है स्मृतिकला ।

स्मृतिकला तीन प्रकार की होती है : तात्कालिक स्मृति, अल्पकालिक स्मृति तथा दीर्घकालिक स्मृति ।

कई जीवों में अल्पकालिक अथवा तात्कालिक स्मृतिकला ही विकसित होती है परंतु मनुष्य में स्मृतिकला के तीनों प्रकार विकसित होते हैं । अतः मनुष्य को प्रकृति का सर्वश्रेष्ठ प्राणी कहा जाता है ।

एक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के अनुसार, 'कुछ याद रखना' यह एक प्रकार की जटिल मानसिक प्रक्रिया है । स्मरणशक्ति अर्थात् सुनी, देखी तथा अनुभव की हुई बातों का वर्गीकरण करके मस्तिष्क में उनका संग्रह करना तथा भविष्य में जब भी उनकी आवश्यकता पड़े उन्हें फिर से जान लेना ।

स्मृति के लिए दिमाग का जो हिस्सा कार्य करता है उसमें एसीटाइलकोलीन, डोपामीन तथा प्रोटीन्स के माध्यम से एक रासायनिक क्रिया होती है । एक प्रयोग के द्वारा यह भी सिद्ध हुआ है कि 'मानव-मस्तिष्क की कोशिकाएँ आपस में जितनी सघनता से गुंथित होती हैं उतना ही उसकी स्मृतिशक्ति का विकास होता है ।'

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, प्रायः सभी प्रकार के मानसिक रोग स्मृति से जुड़े होते हैं, जैसे कि चिन्ता, मानसिक अशांति आदि । इस प्रकार के व्यक्तियों में कोई भी कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व घबराहट इतनी बढ़ जाती है कि वे समय पर जरूरत की चीजों को अच्छी तरह से याद नहीं रख पाते ।

विद्यार्थियों में यह समस्या अधिक पायी जाती है । परीक्षाकाल निकट आने पर अथवा परीक्षा-पत्र को देखकर घबरा जाने से अनेक विद्यार्थी याद किये हुए पाठ भी भूल जाते हैं । इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि स्मरणशक्ति पर मानसिक रोगों का सीधा प्रभाव पड़ता है ।

हमारे प्राचीन ऋषियों ने स्मरणशक्ति को बढ़ाने के लिए प्राणायाम, ध्यान, धारणा आदि अनेक यौगिक प्रयोगों का आविष्कार किया है । उन्होंने तो ध्यान के द्वारा एक ही स्थान पर बैठे-बैठे अनेक ग्रहों तथा लोकों की खोज कर डाली थी ।

महर्षि वाल्मीकि ने ध्यान के द्वारा अपनी बौद्धिक शक्तियों का इतना विकास किया कि श्रीरामावतार से पूर्व ही उन्होंने श्रीराम की जीवनी को 'रामायण' के रूप में लिपिबद्ध कर दिया ।

इसी प्रकार महर्षि वेदव्यासजी ने 'श्रीमद्-भागवत महापुराण' में आज से हजारों वर्ष पूर्व ही कलियुगी मनुष्यों के लक्षण बता दिये थे ।

हमें मानना पड़ेगा कि हमारा प्राचीन ऋषि-विज्ञान इतना विकसित था कि उसके सामने आज के विज्ञान की कोई गणना ही नहीं की जा सकती ।

महर्षि वाल्मीकि तथा वेदव्यासजी द्वारा रचित ये दो ग्रंथ - रामायण तथा महाभारत, उनकी चमत्कारिक तथा विकसित स्मरणशक्ति के प्रत्यक्ष उदाहरण हैं ।

स्मरणशक्ति को बढ़ानेवाला भ्रामरी प्राणायाम हमारे ऋषियों की एक विलक्षण खोज है । भ्रामरी प्राणायाम द्वारा मस्तिष्क की कोशिकाओं में स्पंदन होता है, जो एसीटाइलकोलीन, डोपामीन तथा प्रोटीन के बीच होनेवाली रासायनिक क्रिया में उत्प्रेरक का कार्य करता है जिससे स्मरणशक्ति का चमत्कारिक विकास होता है ।

भ्रामरी प्राणायाम कैसे करें ?

यह प्राणायाम करने के लिए सर्वप्रथम

पाचनशक्ति का मजबूत होना आवश्यक है। पाचनतंत्र में ग्रहण किये गये खाद्य पदार्थों को पचाने तथा उन्हें निष्कासित करने की पूर्ण क्षमता होनी चाहिए।

जिसका पाचनतंत्र कमजोर हो, उसे सर्वप्रथम प्रातः 'पानी-प्रयोग' तथा पाद-पश्चिमोत्तानासन के द्वारा अपने पाचनतंत्र को सुदृढ़ बनाना चाहिए। यह प्राणायाम करनेवाले के लिए उपयुक्त, पोषक तथा सात्त्विक आहार लेना भी अति आवश्यक है क्योंकि शुद्ध तथा पोषक तत्त्व न मिलने के कारण मस्तिष्क की कार्यक्षमता मन्द पड़ जाती है। अतः प्राणायाम करनेवाले व्यक्ति के दैनिक भोजन में उसकी शारीरिक क्षमता के अनुसार कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज तत्त्वों की उपयुक्त मात्रा होनी चाहिए।

प्रातः, मध्याह्न तथा सायंकालीन, तीनों संध्याओं के समय खाली पेट भ्रामरी प्राणायाम करने से स्मरणशक्ति का चमत्कारिक विकास होता है।

विधि : प्रातःकाल शौच-स्नानादि से निवृत्त होकर कम्बल अथवा ऊन से बने हुए किसी स्वच्छ आसन पर पद्मासन, सिद्धासन अथवा सुखासन में बैठ जायें और आँखें बंद कर लें।

ध्यान रहे कि कमर व गर्दन एक सीध में रहें। अब दोनों हाथों की तर्जनी (अँगूठे के पासवाली) उँगलियों से अपने दोनों कानों के छिद्रों को बंद कर लें। इसके बाद खूब गहरा श्वास लेकर कुछ समय तक रोके रखें, तत्पश्चात् मुख बंद करके श्वास छोड़ते हुए भौंरे के गुंजन की तरह 'ॐ...' का लम्बा गुंजन करें।

इस प्रक्रिया में इसका अवश्य ध्यान रखें कि श्वास लेने तथा छोड़ने की क्रिया नथुनों के द्वारा ही होनी चाहिए। मुख के द्वारा श्वास लेना अथवा छोड़ना निषिद्ध है।

श्वास छोड़ते समय होंठ बंद रखें तथा ऊपर व नीचे के दाँतों के बीच कुछ फासला रखें। श्वास अन्दर भरने तथा रोकने की क्रिया में ज्यादा जबरदस्ती न करें। यथासम्भव श्वास अंदर खींचें तथा रोकें। अभ्यास के द्वारा धीरे-धीरे आपकी श्वास लेने तथा रोकने की क्षमता स्वतः ही बढ़ती जायेगी।

हर बार श्वास छोड़ते समय 'ॐ' का गुंजन करें। इस गुंजन द्वारा मस्तिष्क की कोशिकाओं में हो रहे स्पन्दन (कम्पन) पर अपने मन को एकाग्र रखें।

प्रारंभ में सुबह-दोपहर अथवा शाम जिस संध्या में समय मिलता हो, इस प्राणायाम का नियमित रूप से दस-दस मिनट अभ्यास करें। एक माह बाद प्रतिदिन एक-एक मिनट बढ़ाते हुए तीस मिनट तक यह प्राणायाम कर सकते हैं। किंतु शारीरिक रूप से कमजोर अथवा अस्वस्थ लोगों को प्राणायाम की संख्या का निर्धारण अपनी क्षमता के अनुसार करना चाहिए।

त्राटक

त्राटक से भी एकाग्रता के विकास में बड़ी मदद मिलती है। एकाग्र मन से पढ़ा हुआ याद भी शीघ्र हो जाता है।

त्राटक का अर्थ है किसी निश्चित आसन पर बैठकर किसी निश्चित वस्तु, बिंदु, मूर्ति, दीपक, चाँद, तारे आदि को बिना पलक झपकाये एकटक देखना।

त्राटक व ध्यान-भजन के समय देशी गाय के घी का दिया जलाना लाभदायक होता है, जबकि मोमबत्ती से कार्बन डाइऑक्साइड निकलती है जो हानिकारक है।

प्रारंभ में एकटक देखने पर आँखों की पलकें गिरेंगी किंतु फिर भी दृढ़ होकर अभ्यास करते रहें। जब तक आँखों से पानी न टपके, तब तक बिंदु को बिना पलक झपकाये एकटक निहारते रहें। इस प्रकार प्रत्येक तीसरे-चौथे दिन त्राटक का समय बढ़ाते रहें। जितना समय बढ़ेगा उतना ही अधिक लाभ होगा।

त्राटक से एकाग्रता तथा बुद्धि का विकास होता है। एकाग्र मन प्रसन्न रहता है तथा मनुष्य भीतर से निर्भीक हो जाता है। व्यक्ति का मन जितना एकाग्र होता है, समाज पर उसकी वाणी का, उसके स्वभाव का तथा उसके क्रियाकलापों का उतना ही गहरा प्रभाव पड़ता है।

भाँग, शराब, चाय, बीड़ी, कॉफी आदि पदार्थों के सेवन से स्मरणशक्ति क्षीण हो जाती है। गाय

का दूध, गेहूँ, चावल, ताजा मक्खन, अखरोट तथा तुलसी के पत्ते इत्यादि के सेवन से जीवनशक्ति और स्मरणशक्ति का विकास होता है ।

प्रतिदिन सुबह आँखें बंद करके सूर्यनारायण के सामने खड़े होकर नाभि से आधा सें.मी. ऊपर के भाग में भावना करो : 'सूर्य के नीलवर्ण का तेज मेरे मणिपुर केन्द्र को विकसित कर रहा है।' ऐसी भावना करके श्वास भीतर खींचो । सूर्यनमस्कार एवं प्राणायाम करो। पाँच से सात मिनट तक सूर्यस्नान करो। आपका स्वास्थ्य तो सुदृढ़ होगा ही, साथ-ही-साथ स्मृतिशक्ति भी गजब की बढ़ने लगेगी।

[गतांक से आगे]

श्री उड़िया बाबाजी

संन्यास और साक्षात्कार

इस हेतु आप पुनः जगन्नाथपुरी पधारे और अपने गुरुदेव श्री गोवर्धन मठाधीश्वर से ही वि.सं. १९६४ की कार्तिकी पूर्णिमा के दिन विधिवत् संन्यास धर्म की दीक्षा लेकर ब्रह्मचारी वासुदेवस्वरूप से 'स्वामी श्री पूर्णानन्द तीर्थ' हो गये । क्योंकि प्रायः गुरुजनों का नाम नहीं लिया जाता इसलिए प्रतिष्ठा अधिक बढ़ने पर आप 'श्री उड़िया बाबा' नाम से प्रसिद्ध हुए ।

संन्यास के कुछ दिन बाद आप गुरुदेव से आज्ञा लेकर रेल द्वारा काशी की ओर चल पड़े । मार्ग में एक स्थान पर आपको गाड़ी बदलनी थी, किंतु यह बात आपको याद न रही। अतः काशी का टिकट लिये हुए आप छपरा पहुँच गये। यह जानकर टिकट-चेकर आप पर बहुत गुस्सा हुआ और कुछ मारपीट करके आपको गाड़ी से उतार दिया।

यह घटना आपके जीवन के एक स्थायी नियम का निमित्त बनी। कभी-कभी छोटी-सी बात भी बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाती है और जीवन में पूर्ण परिवर्तन कर देती है। महापुरुषों के जीवन में ऐसे बहुत से प्रसंग देखे जाते हैं। राजकुमार गौतम को एक शव देखने से ही अपने विलासी राजवैभव से वैराग्य हो गया था और इसी घटना ने उन्हें एक सुकुमार राजकुमार में से कठोर तपस्वी और कठोर तपस्वी में से भगवान बुद्ध होकर पुजवा दिया। ऐसे ही पत्नी की एक छोटी-सी व्यंगोक्ति ने गोस्वामी तुलसीदासजी को संसार से छुड़ाकर सदा के लिए भगवान राम के श्रीचरणों में अर्पित कर दिया। ऐसी

घटनाएँ हृदय की सजीवता को सूचित करती हैं। जिनके हृदय निर्जीव जैसे हैं वे जीवन में पग-पग पर न जाने कितने तिरस्कार सहते हैं, फिर भी चेतते नहीं हैं।

आप गाड़ी से उतरकर घाघरा नदी के तट पर आये। वहाँ आपने स्नान किया और आजीवन किसी भी सवारी पर न चढ़ने की प्रतिज्ञा कर ली।

तबसे अनेकों बार यात्रा का अवसर आने पर भी आपने अपने जीवन के अंतिम वर्ष तक बड़ी दक्षता और दृढ़ता से इस नियम का पालन किया।

छपरा से कई स्थानों में होते हुए आप राजभार स्टेशन के समीप गोमती तट के एक स्थान पर पहुँचे और वहाँ के महन्त हो गये। किंतु पहले की तरह ही आप इस महन्त पद को भी छोड़कर चले गये और काशी जा पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर आपके चित्त की विचित्र-सी अवस्था हो गयी। आप अपने पास कोई पात्र नहीं रखते थे, केवल एक कम्बल लपेटे हुए जहाँ-तहाँ पड़े रहते थे। सिद्धयोगी की खोज में इतना भटकने पर भी अभी तक कोई सफलता न मिलने के कारण आपका नियमित साधन भी आरम्भ नहीं हुआ था, इसलिए आपके चित्त में बड़ा असन्तोष रहता था। चतुर्मास समीप था। अतः एक महात्मा के कहने से आप चातुर्मास्य के लिए काशी से चार कोस पश्चिम की ओर एक गाँव में चले गये। वहाँ कुछ महात्माओं के साथ आपने चातुर्मास्य किया। उन महात्माओं के बीच कुछ वेदान्त चर्चा भी चलती रहती थी। उन दिनों आपको संतों के संसर्ग से उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र, गीता और योगवाशिष्ठ आदि वेदान्त-ग्रन्थ सुनने का सुअवसर भी मिला। इनके श्रवण-मनन से आपकी जिज्ञासाग्नि जाग्रत हो उठी। अब तो आपको कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। अहर्निश यही चिन्ता लगी रहती थी कि 'किस प्रकार चित्त शांत हो ? किस प्रकार परमार्थ सत्य का अनुभव हो और किस प्रकार यह विश्व-प्रपंच की पहेली सुलझे ?' केवल ग्रंथों को पढ़ने से अनुभव की बात तो समझ में आती नहीं थी और दूसरा कोई उपाय भी नहीं दिखता था।

इस प्रकार संतों के सत्संग ने आपको सिद्धियों और चमत्कारों की चकाचौंध से हटाकर परमार्थ की खोज में लगा दिया। बस, चातुर्मास्य समाप्त होते ही आप गंगाजी के किनारे-किनारे पश्चिम की ओर चल पड़े। परमार्थ-प्राप्ति की उत्कण्ठा ने आपको बहुत ही बेचैन कर दिया था। कभी-कभी तो केवल मील - दो मील चलकर ही आप दिनभर जंगल में पड़े रहते थे। इस प्रकार धीर-धीरे ५-६ मास में आप प्रयाग पहुँचे। वहाँ दारागंज के पास एकांत स्थान में एक मन्दिर के पीछे छोटी-सी कुटी थी। वह स्थान बहुत गन्दा था, इसलिए वहाँ कोई आता-जाता नहीं था। अतः वहाँ एकांत देखकर तीन दिन तक उस कुटी में ही बंद रहने का निश्चय करके आप उसमें आसन लगाकर बैठ गये और भीतर से किवाड़ बंद कर लिये। तीन दिन तक आपने न तो कुछ खाया और न ही शौच या लघुशंका के लिए बाहर आये। जप-ध्यानादि में तो इस समय आपकी श्रद्धा थी नहीं। आप तो कोई दैवी आदेश पाने की प्रतीक्षा में बैठे थे। बाहर ज्येष्ठ मास की भीषण गर्मी पड़ रही थी, लेकिन जब भीतर जिज्ञासाग्नि भभक रही हो तो उसके आगे बाहर की गर्मी क्या मायना रखती है। किंतु इस प्रकार तीन रात और तीन दिन तक कुटी में बंद रहने पर भी आपको कोई दैवी अनुभव न हुआ। आखिर निराश होकर आप बाहर निकल आये। भीतर पड़े-पड़े शरीर जकड़ गया था अतः कुछ स्वस्थ होने पर आप वहाँ से आगे बढ़े।

रास्ते में जहाँ-तहाँ संत-महात्मा भी मिलते रहे, किंतु आपकी श्रद्धा को कहीं भी उचित आश्रय न मिला। वर्षा आरम्भ हो गयी थी, इसलिए आपको बहुत कष्ट सहना पड़ रहा था। परंतु आपके हृदय में जो अग्नि जल रही थी उसके आगे आपको किसी भी विघ्न-बाधा की ओर देखने का अवकाश ही कहाँ था ? आखिर चलते-चलते आप फतेहपुर जिले के एक स्थान पर पहुँचे जो कि अत्यंत निर्जन और शांत था। यहाँ भागीरथी के तट पर एक प्राचीन शिवालय था, जिसके आस-पास कुछ कुटियाँ थीं। भगवान भास्कर दिनभर की यात्रा से थककर प्रतीची (पश्चिम दिशा) की गोद में विश्राम पाने के लिए जा रहे थे। आप वहीं चुपचाप बैठकर गंगाजी की अभंग अंगभंगिमा को

निहारने लगे। परंतु इससे भी आपको कुछ शांति न मिली, इससे तो आपके भीतर की अग्नि और भी सुलग उठी। अब आपको अपना जीवन भाररूप प्रतीत होने लगा और आपने उसे गंगाजी की गोद में लीन करने का विचार कर लिया।

बस, आपने जो चादर ओढ़ रखी थी वह उतारकर अलग रख दी और तूँबा गंगाजी में फेंक दिया। अब जब आप स्वयं कूदने लगे तो आपके चित्त में एक विचार आया और इस प्रकार प्राण न्योछावर करने में आपको कोई सार न दिखाई दिया। आप सोचने लगे : 'मरने से भी क्या होगा ? विचार करना चाहिए। सम्भव है विचार करते-करते कोई अनुभव हो जाय।' यह सोचकर आप शिवालय के भीतर गये। चित्त में नास्तिकता के भाव तो बढ़े ही हुए थे, अतः आप शिवलिंग से पैर लगाकर लेट गये। लेटे-लेटे तरह-तरह के संकल्प होने लगे। आँखें झपकने लगीं और आपको तन्द्रा-सी आ गयी। भगवान शंकर भी बड़े भोले बाबा हैं। कभी-कभी वे तिरस्कार के बदले भी अक्षय पुरस्कार दे देते हैं।

आपने देखा कि दो विरक्त परमहंस पधारे हैं। उनके शरीर हृष्ट-पुष्ट और गौर कान्ति से देदीप्यमान हैं। उनके शरीर पर दिव्य तेजोमय काषाय वस्त्र, उन्नत और विशाल भाल पर स्वच्छ भस्म तथा कण्ठ में रुद्राक्ष की माला और हाथ में कमण्डलु सुशोभित हैं। मानों, साक्षात् नर-नारायण ही आपको भवबन्धन से मुक्त करने के लिए पधारे हों। उन्हें देखकर आप खड़े हो गये और उनसे सृष्टितत्त्व के विषय में प्रश्न करने लगे। आप जो भी प्रश्न पूछते उसका वे बड़ा समाधानकारक उत्तर देते। यह क्रम बड़ी देर तक चलता रहा। धीरे-धीरे एक-एक करके आपकी सारी उलझनें सुलझ गयीं। अन्त में उन्होंने आपको दो श्लोक याद रखने को कहा :

नेति नेतीति नेतीति शेषितं यत्परं पदम्।
निराकर्तुमशक्यत्वात्तदस्मीति सुखी भव॥

'यह नहीं है, यह नहीं है, यह नहीं है - इस प्रकार (स्थूल, सूक्ष्म और कारण प्रपंच का निषेध करने पर) जो निषेध करने के अयोग्य परम पद शेष रहता है, वही मैं हूँ - ऐसा जानकर सुखी हो जा।'

जड़तां वर्जयित्वैतां शिलाया हृदयं च यत्।
अमनस्कं महाबाहो तन्मयो भव सर्वदा॥

'इस अज्ञानरूपी जड़ता को त्यागकर जो शिला के हृदय के समान घनीभूता अमनस्कता है सर्वदा तद्रूप अथवा शुद्ध चिन्मय होकर स्थित रहो।'

आप सब प्रकार से स्वस्थ हो गये, आपकी सब शंकाएँ निवृत्त होकर हृदय की ग्रंथि खुल गयी। अब आपको सारा दृश्य अपनी ही दृष्टि का विलासमात्र दिखने लगा। ऐसा अनुभव होने लगा मानों, सारा दृश्य शून्यरूप है। इसका कोई आधार नहीं है। इस शून्याशून्य से विलक्षण, इसका आधारभूत एकमात्र मैं ही अखण्ड परिपूर्ण तत्त्व हूँ। मुझसे भिन्न और कुछ है ही नहीं। ये अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड मुझमें ही अध्यस्त हैं और इनका अधिष्ठानभूत मैं इनसे सर्वथा असंग हूँ। यह अनुभव इतना स्पष्ट था मानों, आप खुले नेत्रों से देख रहे हों। इससे आपके चित्त को पूर्ण शान्ति और कृतकृत्यता का अनुभव हुआ। ऐसा जान पड़ा मानों, मैं ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सार्वभौम सम्राट हूँ। इस प्रकार आपकी सारी दीनता और बेचैनी दूर हो गयी और आप वास्तव में ही पूर्णानन्दस्वरूप हो गये। (क्रमशः)

जगत में अधम कौन ?

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

एक बार ८८,००० ऋषि-मुनि नैमिषारण्य में सत्संग के लिए एकत्रित हुए । इतने में भगवान वेदव्यासजी भी वहाँ आ पहुँचे । ऋषि-मुनियों ने उनका खूब-खूब स्वागत-सत्कार किया । श्री वेदव्यासजी के सम्मान में वैशम्पायन आदि ने वंदना की, श्लोक उच्चारित किये और अभ्यर्चना की ।

भगवान वेदव्यासजी से प्रार्थना करके दिव्य ज्ञान-प्राप्ति हेतु एक सत्र रखा गया । व्यासजी ने उन ऋषि-मुनियों, जपी-तपियों, योगियों का ज्ञान बढ़ाने के लिए उनके बीच एक प्रश्न रख दिया :

''इस जगत में जघन्य कौन है ? निन्दनीय कौन है ? सबसे छोटा, अधम और नीच कौन है ? किसका जीवन व्यर्थ है ?''

एक तपस्वी खड़े हुए और बोले : ''जिसके पास धन नहीं है वह निन्दनीय है। जगत में धनवान की सराहना होती है और निर्धन दुत्कारा जाता है। धन नहीं है तो अधम-से-अधम काम तो क्या, भीख भी माँगनी पड़ती है। निर्धन व्यक्ति ही अधमाधम है।''

दूसरे ऋषि ने कहा : ''जिसके पास विद्या नहीं है, वह नीच है । विद्वान तो धन भी कमा लेता है और कुरूप होते हुए भी आदर-सत्कार पा लेता है। इसलिए विद्याहीन व्यक्ति ही निन्दनीय है।''

तीसरे ऋषि ने कुछ कहा, चौथे ने कुछ... किंतु सभी सही उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे थे। आखिर में सभीने वेदव्यासजी से हाथ जोड़कर प्रार्थना की : ''भगवन् ! आप सभी ऋषियों के सिरमौर हैं। पंचम वेद 'महाभारत' एवं १८ पुराणों के रचयिता हैं। विश्व के प्रथम आर्षग्रंथ 'ब्रह्मसूत्र' के रचयिता भी आप ही हैं। हम आपके ही श्रीमुख से सुनना चाहेंगे कि अधमाधम कौन है ?''

व्यासजी ने कहा : ''निर्धन अधम नहीं, अनपढ़ भी अधम नहीं, रोगी अधम नहीं, दुर्बल भी अधम नहीं, स्त्री अधम नहीं, पुरुष भी अधम नहीं, किसी जाति का व्यक्ति भी अधम नहीं है। फिर भी कोई अधम है। जो मनुष्य-जन्म पाकर भी भगवान का सुमिरन-चिन्तन-ध्यान नहीं करता वह अधमाधम है।''

अपनी बात को अधिक स्पष्ट करते हुए व्यासजी ने कहा : ''जिस भगवान ने सूरज दिया, चंदा दिया, हजारों तरह के फलादि दिये और जो परमात्मा हमारी हजार-हजार गलतियों को क्षमा करके हमें मोक्ष का रास्ता भी बताते हैं, ऐसे भगवान का जो स्मरण-चिन्तन नहीं करता, वह मनुष्य होते हुए भी अधम है । दुर्लभ मानव-शरीर पाकर भी यदि कोई भजन न करे तो वह अधम ही है।''

तुलसीदासजी ने भी कहा है :

सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा।
जो तनु पाइ भजिअ रघुबीरा॥

उसीका शरीर पावन है जो भगवान का भजन करता है। प्यारे विद्यार्थियो ! आपको इस कथा से कुछ पल्ले पड़ा हो तो भगवन्नाम-जप और सुमिरन का दृढ़ नियम बना लो।

आरती में कपूर का उपयोग

हमारे देश में प्राचीन काल से ही आरती करने का विधान है । आरती के समय कपूर जलाया जाता है। कपूर-दहन में बाह्य वातावरण को शुद्ध करने की अद्भुत क्षमता है । इसमें जीवाणुओं, विषाणुओं तथा सूक्ष्मतर जीवों को नष्ट करने की शक्ति है। घर में नित्य कपूर जलाने से घर का वातावरण शुद्ध रहता है, शरीर पर बीमारियों का आक्रमण आसानी से नहीं होता, दुःस्वप्न नहीं आते और देवदोष तथा पितृदोषों का शमन होता है।

भारतीय परम्पराएँ कितनी महत्त्वपूर्ण !

सनातन धर्म की परम्पराएँ, रीति-रिवाज पूर्णतः वैज्ञानिक हैं । भारत के तपस्वी ऋषि-महर्षियों ने समाधि-अवस्था में अनुसंधान करके मानव-जाति के सुखी व स्वस्थ जीवन के लिए विभिन्न युक्तियों की खोज की । जिनका पालन परम्परागत रूप से हिन्दू तथा हिन्दू धर्म पर आस्था रखनेवाले करते आये हैं। जैसे, तुलसी-सेवन, सूर्य को अर्घ्य देना, रात्रि को जल्दी भोजन करना, पूर्णिमा, अमावस्या आदि तिथियों में संभोग-निषेध (इससे विकलांग संतान उत्पन्न होती है) । इनका किसी भी धर्मवालों ने पालन किया, उन्हें लाभ ही हुआ है । कैसा मानवमात्र के हित का अनुसंधान है कि किसी भी धर्म के लोग इसका पालन करें तो उन्हें लाभ होता है !

आप किसी भी जाति-धर्म के हों, उपर्युक्त नियमों के पालन से लाभ उठा सकते हैं तथा अवहेलना से हानि पहुँचती है । जैसे, भाद्रपद शुक्ल चौथ (गणेश चतुर्थी) को चाँद देखनेवालों के ऊपर लांछन लगते हैं। भगवान श्रीकृष्ण ने उस दिन चाँद देखा तो उन पर भी स्यमंतक मणि की चोरी का कलंक लगा । पूज्य बापूजी ने देखा तो उन्हें भी लगा।

विश्व के अनेक वैज्ञानिकों ने हिन्दू धर्म की प्राचीन परम्पराओं का गहन अध्ययन किया है और वे विज्ञान की कसौटी पर खरी उतरी हैं।

डॉ. एनी बेसेंट ने कहा है :

''मैंने ४० वर्षों तक विश्व के सभी बड़े धर्मों का अध्ययन करके पाया कि हिन्दू धर्म के समान पूर्ण, महान और वैज्ञानिक धर्म दूसरा कोई नहीं है।''

आजकल भारत के ही कई कॉन्वेंट स्कूलों में विद्यार्थियों को भारतीय परिधान व आभूषण पहनने पर रोक लगाया जाना व दण्डित किया जाना चिन्ताजनक है।

भारतीय परम्परानुसार आभूषण धारण करना फैशन का प्रतीक नहीं अपितु तन और मन की चिकित्सा-पद्धति का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। मानव-शरीर पर पड़नेवाले अलग-अलग धातुओं के प्रभाव को हमारे पूर्वज भलीभाँति जानते थे । इतना ही नहीं, इन धातुओं का औषध के रूप में भी उपयोग किया जाता था, जो आज भी हो रहा है । जैसे, सुवर्ण भस्म, रजत भस्म, बंग भस्म, लौह भस्म आदि ।

दुनिया के कुछ अन्य देशों में भी रोग निवारण के लिए आभूषण चिकित्सा-पद्धति का प्रयोग होता है । अमेरिका के वैज्ञानिक डॉ. हार्डस्टोन ने धातु और रत्न चिकित्सा-पद्धति का उपयोग किया है। फ्रांस में भी इस पर कई प्रयोग हुए हैं और इसमें उनको सफलता भी मिली है।

आभूषणों का शरीर के अंगों पर प्रभाव

पायल : (१) पैर में पहना हुआ शुद्ध चाँदी का कड़ा अथवा मोटी पायल पैर के तलवों में होनेवाली जलन को रोकती है। (२) एड़ी की सूजन से रक्षा करती है। (३) रक्त के परिसंचरण को व्यवस्थित रखती है। (४) सायटिका के रोग में लाभदायी है। (५) लिम्फ ग्रंथियों को कार्यान्वित करके रोग-प्रतिकारक शक्ति बढ़ाती है । (६) अनेक प्रकार के स्त्री रोगों जैसे, मासिक धर्मसम्बन्धी, प्रसूतिसम्बन्धी, वंध्यत्व, हारमोन्स के असंतुलन आदि में लाभदायक है । (७) स्वास्थ्य और सुन्दरता के लिए शरीर की चेतना के प्रवाह को व्यवस्थित करके तंदुरुस्ती की रक्षा करती है। (८) कामवासना पर नियंत्रण रखने में सहायक होती है। कमर से नीचे के भागों में चाँदी के आभूषण पहनने से महिलाओं को लाभ होता है।

आयुर्वेद के अनुसार कमर से नीचे के भागों पर सोने के आभूषण धारण करना वर्जित है।

कर्ण-कुंडल : भारतीय संस्कृति में कर्ण-छेदन का भी एक विशेष महत्त्व है । चिकित्सकों और भारतीय दर्शनशास्त्रियों का मानना है कि कर्णछेदन से बुद्धिशक्ति, विचारशक्ति और निर्णयशक्ति का विकास होता है । वाणी के व्यय से जीवनशक्ति का ह्रास होता है । कर्णछेदन से वाणी के संयम में सहायता मिलती है । इससे उच्छृंखलता नियंत्रित होती है और कर्णनलिका दोषरहित बनती है । यह विचार पाश्चात्य जगत के लोगों को भी जँचा और वहाँ आज फैशन के रूप में कर्णछेदन कराकर कुंडल पहने जाते हैं ।

कंगन : कंगन से जननेन्द्रिय पर नियंत्रण रहता है और कामवासना संतुलित रहती है तथा यह हृदय को पुष्ट करता है । रक्त के दबाव को नियंत्रित करता है ।

बाजूबंद : इससे वीरता के गुण विकसित होते हैं और शरीर सुडौल रहता है । यह पाचनतंत्र को व्यवस्थित रखता है और एलर्जी से रक्षा करता है ।

हार : विभिन्न रत्नों और धातुओं से बने हार अनेक रोगों को नियंत्रित करने में लाभदायी हैं । थायराइड ग्रंथि और श्वसनतंत्र पर इनका अच्छा असर पड़ता है ।

करधनी : यह मूलाधार केन्द्र को जागृत करके किडनी और मूत्राशय की कार्यक्षमता को बढ़ाती है तथा कमर आदि के दर्दों में राहत देती है ।

अँगूठी : ऊर्जा के विकास, मानसिक तनाव दूर करने, जननेन्द्रिय पर नियंत्रण पाने, कामवासना पर नियंत्रण रखने और पाचनतंत्र को मजबूत बनाने हेतु मिलावटरहित सोने की अँगूठी पहनी जाती है । विभिन्न धातुओं की अँगूठी का शरीर पर अलग-अलग प्रभाव पड़ता है, ऐसे ही अलग-अलग रत्नों (नगों) का भी अपना अलग-अलग प्रभाव होता है ।

'केन्टरबरी इन्स्टीट्यूट' में किये गये प्रयोगों से सिद्ध हुआ है कि नाभि, सिर, हाथ और पैरों को वस्त्र से ढककर रखने से सुरक्षा की भावना दृढ़ होती है । मस्तिष्क में बहती ऊर्जाएँ भृकुटी में से पसार होती हैं । दोनों भौंहों के बीच तिलक लगाने से (जैसे हिन्दू लोग लगाते हैं) इस ऊर्जा का रक्षण होता है । पैरों के रक्षण हेतु लोहे के कड़े पहने जाते हैं ।

तिलक का महत्त्व

ललाट पर दोनों भौंहों के बीच विचारशक्ति का केन्द्र है । योगी इसे आज्ञाचक्र कहते हैं । इसे शिवनेत्र अर्थात् कल्याणकारी विचारों का केन्द्र भी कहा जाता है ।

दोनों भौंहों के बीच ललाट पर चंदन या सिंदूर आदि का तिलक आज्ञाचक्र और उसके नजदीक की पीनियल और पीयूष ग्रंथियों को पोषण देता है । यह बुद्धिबल व सत्त्वबलवर्धक है तथा विचारशक्ति को भी विकसित करता है । अतः तिलक लगाना आध्यात्मिक तथा वैज्ञानिक, दोनों दृष्टिकोणों से बहुत लाभदायक है । इसलिए हिन्दू धर्म में कोई भी शुभ कार्य करते समय ललाट पर तिलक लगाते हैं ।

पूज्य संत श्री आसारामजी बापू को चन्दन का तिलक लगाकर सत्संग करते हुए लाखों-करोड़ों लोगों ने देखा है । वे लोगों को भी तिलक लगाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं ।

अधिकांश स्त्रियों का मन स्वाधिष्ठान और मणिपुर केन्द्र में ही रहता है । इन केन्द्रों में भय, भाव और कल्पना की अधिकता होती है । वे भावनाओं और कल्पनाओं में न बह जायें, उनका शिवनेत्र, विचारशक्ति का केन्द्र विकसित हो, इस उद्देश्य से ऋषियों ने स्त्रियों के लिए तिलक लगाने का विधान रखा है ।

चंदन, सिंदूर के तिलक से जो फायदा होता है, वह आजकल की केमिकल युक्त बिंदियों से नहीं होता ।

शिखा का महत्त्व

शिखा (चोटी) रखना हमारी संस्कृति का एक पावन संस्कार है । इसकी महत्ता को स्वीकारते हुए पाश्चात्य जगत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक नेल्सन ने अपनी पुस्तक 'ह्यूमन मशीन' में लिखा है : 'मानव-शरीर में सतर्कता के सारे कार्यक्रमों का संचालन सिर पर शिखा रखने के स्थान से होता है । आस-पास के वातावरण, जल, वायु आदि में आनेवाले तनिक से भी परिवर्तन को समझने का, ग्रहण करने का और परिवर्तन के अनुसार समायोजन का कार्य शिखा-स्थल से ही होता है ।'

अतीन्द्रिय ज्ञान, ध्यान द्वारा आकाश में मौजूद सूक्ष्म शक्तियों के आकर्षण का मूल बिन्दु भी शिखा-स्थान ही है।

नेल्सन कहते हैं : 'जिस प्रकार एरियल अथवा एन्टेना रेडियो और टी.वी. के संदेश ग्रहण करता है, उसी प्रकार ब्रह्माण्ड की सूक्ष्म शक्तियों को ग्रहण करने का कार्य शिखा-स्थान द्वारा ही होता है।'

संत हरिदास, राजा रणजीतसिंह की उपस्थिति में जब एक माह की समाधि लगाकर बाहर निकले तो वैज्ञानिकों ने उनकी जाँच करते समय पाया कि उनकी चोटीवाले स्थल का तापमान इतना अधिक था कि उसे छुआ भी नहीं जा सकता था। इससे उन्होंने पता लगाया कि समाधि-अवस्था में श्वास लेने और शरीर के कोषों की उत्सर्जन-क्रिया रोककर उन्हें यथावत् रखने का काम तक इसी स्थान द्वारा किया जाता है।

योग की भाषा में इसे सहस्रार केन्द्र भी कहा जाता है जो शरीर के सप्त चक्रों का अंतिम बिन्दु है। इस केन्द्र को हम जितना अधिक सुसंस्कारित और विकसित करते हैं, उतना ही संसार के रहस्यों, आत्मा के रहस्यों और भूत-भविष्य की घटनाओं की सत्य जानकारी का स्पष्ट अनुभव कर सकते हैं। हमारे ऋषि-मुनि इसी शिखा-स्थान की सहायता से भविष्य का पता लगाने में समर्थ होते थे। हजारों वर्ष पहले 'श्रीमद्भागवत' में की गयी भविष्यवाणी कि 'कलियुग में ऐसे-ऐसे राजा आयेंगे... लोगों का ऐसा-ऐसा आचरण होगा...' आदि अभी सच्ची दिख रही है।

वैज्ञानिकों ने परीक्षण कर यह निष्कर्ष निकाला है कि मस्तिष्क का यह भाग सूक्ष्म आँख का काम करता है।

भारत के ऋषि-मुनियों ने इतनी सूक्ष्मतम खोजें कर रखी हैं किंतु हम पाश्चात्य संस्कृति के पीछे पागलों की भाँति दौड़ रहे हैं। भारत के साधु-संतों के पास व्यावहारिक व आध्यात्मिक जीवन जीने का अनमोल खजाना है किंतु उन अनमोल रत्नों को छोड़कर भारत के विद्यार्थी संस्कृति-विहीन देशों का अनुकरण करने में लगे हैं ! कितने दुर्भाग्य की बात है !

टाई या फाँसी का फंदा ?

आजकल पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित विद्यालयों में विद्यार्थियों को 'टाई' पहनने के लिए बाध्य किया जाता है। टाई न तो अपने देश के वातावरण के अनुकूल है और न ही अपने स्वास्थ्य के अनुरूप है। वास्तव में तो टाई बालकों के मन में बचपन से ही गुलामी के संस्कार भरने का महत्त्वपूर्ण साधन बन रही है।

एक बार दिव्य जीवन संघ के संस्थापक स्वामी शिवानंद सरस्वती के पास स्वयं को सभ्य माननेवाला एक व्यक्ति आया और बोला :

''मैंने बहुत-सी दवाइयाँ लीं, किंतु मेरा सिरदर्द नहीं मिट रहा है।''

स्वामी शिवानंद ने कहा : ''पाश्चात्य देशों में ठंड अधिक है इसलिए कहीं सर्दी न हो जाय इस डर से वहाँ के लोग टाई पहनते हैं। भारत का वातावरण गरम है। टाई पहनने से गले की नसों पर दबाव पड़ता है, जिससे रक्त के परिभ्रमण में परेशानी होती है। जब तक तुम गले में यह फंदा रखोगे तब तक ठीक नहीं होगे। चाहे कितने भी उपचार कराओ, सिरदर्द दूर नहीं होगा।'

हुआ भी ऐसा ही। टाई निकालने पर सिरदर्द, तनाव, रोग व अहंकार से उसका पिंड छूटा। स्वस्थ व सहज जीवन का परिचय मिला।

इसी प्रकार तंग कपड़े पहनने से हमारे रोमकूप कार्य नहीं कर पाते। फलतः किडनी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

स्वप्नदोष से बचाव

** 'ॐ अर्यमायै नमः' मंत्र का सोने से पूर्व २१ बार जप करने से बुरे सपने नहीं आते।*

** सोने से पहले तकिये पर तर्जनी उँगली से अपनी माता का नाम लिखकर सोने से बहुत लाभ होता है।*

** आँवले और हल्दी का चूर्ण समान मात्रा में मिलायें। ७ दिन तक यह मिश्रण सुबह-शाम ३-३ ग्राम लेने से चमत्कारिक लाभ होता है। इसके सेवन से २ घंटे पूर्व व पश्चात् दूध न लें।*

कल्याणकारक सुवर्णप्राश

वेदों तथा शास्त्रों में सुखी, स्वस्थ व सुसंपन्न जीवन के लिए सोलह संस्कारों का वर्णन आता है। इनमें एक प्रमुख संस्कार है - जातकर्म संस्कार। बालक के जन्म के बाद उसे शरीर, मन व बुद्धि से स्वस्थ रखने के लिए जो भी आवश्यक कर्म किये जाते हैं उन्हें जातकर्म संस्कार कहते हैं।

संस्कार अर्थात् मनुष्य के मनोदैहिक तंत्र पर पड़ी उसके कर्मों की छाप। संस्कार अव्यक्त रूप से प्राणी में विद्यमान रहते हैं। इनकी शक्ति बड़ी प्रबल होती है। ये प्राणी के चेतन व अचेतन व्यवहार को अनजाने में ही प्रभावित करते रहते हैं। अनुकूल अवसर मिलते ही ये सूक्ष्म संस्कार पुनः स्थूल वृत्तियों का रूप धारण कर लेते हैं और मनुष्य के व्यवहार में व्यक्त होने लगते हैं। जैसे जिसके संस्कार, वैसा ही उसका आचरण होता है। अतः हिन्दू संस्कृति में संस्कारों की ओर अत्यधिक ध्यान दिया गया है।

'कश्यप संहिता' सूत्रस्थान के प्रथम अध्याय में 'जातकर्म संस्कार' के अन्तर्गत 'सुवर्णप्राश' का उल्लेख आता है, जिसमें पूर्व दिशा की ओर मुख करके धोये हुए स्वच्छ पत्थर पर थोड़े से पानी में शुद्ध सुवर्ण घिसकर उसमें देशी गाय का घी व शहद विषम मात्रा में मिलाकर बालक को देने के लिए कहा गया है।

आयुर्वेद के श्रेष्ठ ग्रंथ 'अष्टांगहृदय' के अनुसार शुद्ध सुवर्ण, वेखंड (वचा), ब्राह्मी, सुवर्णमाक्षिक और हरितकी (हरड़े) का चूर्ण, घी और शहद के विमिश्रण (विषम मात्रा से बने मिश्रण) में मिलाकर देना चाहिए। यह योग पुष्य नक्षत्र के दिन बनाने पर अत्यंत लाभदायी सिद्ध होता है। यह सुवर्णप्राश बालक को जन्म से लेकर तीन साल तक दें।

नवजात शिशु को जन्म से लेकर एक माह तक रोज नियमित रूप से सुवर्णप्राश देने से वह अतिशय बुद्धिमान बनता है और सभी प्रकार के रोगों से उसकी रक्षा होती है। यह प्रयोग छः मास तक चालू रखने पर बालक श्रुतिधर होता है अर्थात् सुनी हुई हर बात धारण कर लेता है।

सुवर्णप्राश मेधा, बुद्धि, अग्नि, आयु और बल को बढ़ानेवाला, कल्याणकारक, पुण्यदायी, वृष्य (धातुवर्धक), वर्ण्य (त्वचा की कांति बढ़ानेवाला), ग्रहबाधा व ग्रहपीड़ा दूर करनेवाला है।

सुवर्णप्राश से होनेवाले लाभ :

(१) बालक के शरीर का समुचित विकास होता है। वह चपल बनता है।

(२) शरीर की कांति उज्ज्वल और वर्ण उत्तम हो जाता है।

(३) यह जठराग्नि की वृद्धि कर भूख बढ़ाता है, जिससे बालक का शरीर पुष्ट होता है।

(४) बाल्यावस्था में बार-बार उत्पन्न होनेवाले कफजन्य विकारों (सर्दी, खाँसी, जुकाम, न्यूमोनिया आदि) से छुटकारा मिलता है।

(५) बालक की रोगप्रतिकारक शक्ति बढ़ती है। आज के अत्यधिक प्रदूषित वातावरण के कारण जीवाणुओं तथा विषाणुओं के संसर्ग से उत्पन्न होनेवाले रोगों से बालक की रक्षा होती है।

आजकल बालकों को सर्दी, बुखार, अतिसार जैसी छोटी-छोटी बीमारियों में भी द्रवरूप जीवाणु प्रतिरोधक (एन्टीबायोटिक्स) पिलाये जाते हैं जो अत्यंत हानिकारक होते हैं। इनके सेवन से रोगों के बाह्य लक्षण तो लुप्त हो जाते हैं परंतु रोग अंदर दब जाते हैं। इससे रोगों का मूल कारण आम विष नष्ट नहीं होता, शरीर में ही पड़ा रहता है और ऊपर से जीवाणु प्रतिरोधकरूप विष भी बालकों के शरीर में रह जाता है जो समय पाकर विविध बीमारियों का रूप धारण कर लेता है। अतः **जीवाणु प्रतिरोधकों से सावधान रहें।** सुवर्णप्राश एक प्राकृतिक जीवाणु प्रतिरोधक है जो बालकों की संसर्गजन्य तथा संक्रामक व्याधियों से भी रक्षा करता है।

(६) यह एक प्रकार का आयुर्वेदिक रोगप्रतिकारक टीका भी है जो बालकों का पांगुल्य (पोलियो), क्षयरोग (टी.बी.), विशुचिका (कॉलरा) आदि से रक्षण करता है।

सुवर्ण को शास्त्रीय पद्धति से शुद्ध करके उसका पतला तार बनाकर वेखंड (वचा) की लकड़ी में पिरोकर रख लें। बच्चों को रोज घी और शहद के असमान मिश्रण में यह लकड़ी घिसकर देने से भी उक्त लाभ होते हैं।

प्रथम दिन लकड़ी को एक बार घिसकर दें। दूसरे दिन २ बार। इस प्रकार प्रतिदिन १-१ घसारा बढ़ाते जायें। [एक घसारा अर्थात् पत्थर के साफ चकले (होरसा) पर लकड़ी को एक बार गोलाकार घिसना।] इस प्रकार ३ माह तक दें। तत्पश्चात् वही मात्रा ३ वर्ष तक चालू रख सकते हैं।

यदि आप सुवर्णप्राश बना सकते हैं तो ठीक है अन्यथा 'साईं श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, सूरत' के वैद्यों की देखरेख में बनाया हुआ सुवर्णप्राश (सोगठी तथा गोली) १०० रु. के भीतर प्राप्त हो सकेगा।

इस सुवर्णप्राश में मस्तिष्क, हृदय एवं मनोवह, प्राणवह तथा पाचन संस्थान पर उत्कृष्ट कार्य करनेवाली अनुभूत औषधियाँ मिलायी गयी हैं, जो बालकों के बौद्धिक विकास के साथ-साथ मानसिक तथा शारीरिक विकास के लिए भी विशेष लाभदायी हैं। विद्यार्थी भी धारणाशक्ति, स्मरणशक्ति, प्राणशक्ति तथा शारीरिक शक्ति बढ़ाने के लिए इसका उपयोग कर सकते हैं।

माताएँ गर्भिणी अवस्था में प्राणीजन्य कैल्शियम, लौह तथा जीवनसत्त्वों (विटामिन्स) की गोलियों के स्थान पर अगर सुवर्णप्राश का प्रयोग करें तो ओजस्वी-तेजस्वी और मेधावी संतान को जन्म दे सकती हैं। यह एक उत्तम गर्भपोषक है। इसमें उपस्थित शुद्ध केसर बालक के वर्ण में निखार लाता है।

वृद्धावस्था में जब शरीर के विविध अंग शिथिल हो जाते हैं, इन्द्रियाँ विषयों को ग्रहण करने में निर्बल हो जाती हैं, ऐसी अवस्था में यह कल्याणकारक सुवर्णप्राश विशेष लाभदायी है।

बालक के लिए कुल मिलाकर १००-२०० रु. लगाने से वह मेधावी व प्रभावशाली बन सकता है। यह एक सस्ता व ऊँचा प्रयोग है। हम चाहते हैं कि सभी उम्र के लोग इसका लाभ उठायें। सुवर्णप्राश एकाध माह में सभी आश्रमों में उपलब्ध हो सकेगा।

सावधानी : घी और शहद विषम मात्रा में अर्थात् शहद अधिक व घी कम अथवा घी अधिक व शहद कम मात्रा में लें। देशी गोघृत व प्राकृतिक ढंग से बने शुद्ध शहद का ही प्रयोग करें।

*

ग्रीष्म ऋतुचर्या

वसंत ऋतु की समाप्ति के बाद ग्रीष्म ऋतु प्रारंभ होती है। अगर इन दिनों में वातप्रकोपक आहार-विहार करते रहें तो यही संचित वात ग्रीष्म ऋतु के बाद आनेवाली वर्षा ऋतु में अत्यंत कुपित होकर विविध व्याधियों को आमंत्रण देता है। ग्रीष्म ऋतु में प्राणियों के शरीर का जलीयांश कम हो जाता है जिससे कमजोरी, बेचैनी, ग्लानि, अनुत्साह, थकान आदि परेशानियाँ उत्पन्न होती हैं और प्यास ज्यादा लगती है। इसलिए ग्रीष्म ऋतु में कम आहार लेकर बार-बार शीतल जल पीना हितकर है।

आयुर्वेद के अनुसार **'चय एव जयेत् दोषं।'** अर्थात् दोष जब शरीर में संचित होने लगें तभी उनका शमन करना चाहिए। अतः इस ऋतु में वात का शमन करनेवाले तथा शरीर में जलीय अंश का संतुलन रखनेवाले मधुर, तरल, सुपाच्य, हलके, ताजे, स्निग्ध, रसयुक्त, शीत गुणयुक्त, पौष्टिक पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

आहार : ग्रीष्म ऋतु में पुराने साठी के चावल, गेहूँ, दूध, मक्खन तथा गौघृत के सेवन से शरीर में शीतलता, स्फूर्ति और शक्ति आती है। सब्जियों में लौकी, कुम्हड़ा (पेठा), नेनुआ, परवल, करेला, केले के फूल, चौलाई, हरी ककड़ी, हरा धनिया, पुदीना और फलों में तरबूज, खरबूजा, नारियल, मौसमी, आम, सेब, अनार, अंगूर का सेवन लाभदायी है।

इस ऋतु में नमकीन, रुखे, बासी, तेज मिर्च-

मसालेदार तथा तले हुए पदार्थ, अमचूर, आचार, इमली आदि तीखे, खट्टे, कसैले एवं कड़वे रसवाले पदार्थ न खायें । गर्मी से बचने के लिए बाजारू शीतपेय (कोल्ड ड्रिंक्स), आइसक्रीम, आइसफ्रूट, डिब्बाबंद फलों के रस का सेवन कदापि न करें । ये पदार्थ पित्तवर्धक होने के कारण आंतरिक गर्मी बढ़ाते हैं । रक्तस्राव, खुजली आदि चमड़ी के रोग व चिड़चिड़ेपन की बीमारी को जन्म देते हैं ।

इनकी जगह कच्चे आम को भूनकर बनाया गया मीठा पना, पानी में नींबू तथा मिश्री मिलाकर बनाया गया शरबत, हरे नारियल का पानी, फलों का ताजा रस, ठंडाई, जीरे की शिकंजी, दूध और चावल की खीर, गुलकंद आदि शीतल तथा जलीय पदार्थों का सेवन करें । इससे सूर्य की अत्यंत उष्ण किरणों के दुष्प्रभाव से शरीर का रक्षण किया जा सकता है ।

ग्रीष्म ऋतु में दही अथवा छाछ का सेवन निषिद्ध है । अगर छाछ लेनी ही हो तो ताजी, मीठी छाछ में मिश्री तथा जीरा मिलाकर लें । फल एवं दूध एक साथ न लें । फल के बाद दूध लेना हो तो कम-से-कम पौन घंटे का अंतर होना चाहिए । दूध लेने के ढाई घंटे बाद फल आदि लिया जा सकता है ।

ग्रीष्म ऋतु में चाय, कॉफी, सिगरेट, बीड़ी, तम्बाकू, गुटखा आदि का सेवन अन्य ऋतुओं की अपेक्षा विशेष हानि करता है । सावधान ! अपनी सेहत का भविष्य मत बिगाड़ो । सूर्य की अत्यधिक उष्ण किरणों से दाह, उष्णता, मूर्च्छा, नेत्रविकार आदि कष्ट होते हैं । धूप की गर्मी से व लू लगने से बचने के लिए सिर पर कपड़ा रखना चाहिए एवं थोड़ा-थोड़ा पानी पीते रहना चाहिए । तेज धूप में बाहर न निकलें । अगर बाहर जाना ही हो तो पानी पीकर जायें तथा सिर व आँखें ढक लें । उष्ण वातावरण में से ठंडे वातावरण में आने के बाद तुरंत पानी न पियें, १०-१५ मिनट के बाद ही पियें । इन दिनों में फ्रिज, कूलर का ठंडा पानी पीने से गले, दाँतों एवं आँतों पर बुरा प्रभाव पड़ता है, इसलिए मटके या सुराही का पानी पियें । ग्रीष्म ऋतु में जठराग्नि मंद होने के कारण अपच, दस्त, उलटी आदि बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं । इनसे बचने के लिए दिन में एक ही बार ताजा-हलका-सुपाच्य भोजन करें । अन्य समय पर फलों का ताजा रस, शिकंजी अथवा दूध का प्रयोग करें ।

नाक में गाय के घी अथवा बादाम रोगन की २-२ बूँदें डालें । इससे सिर तथा आँखों की गर्मी में आराम मिलता है ।

ग्रीष्म ऋतु में प्रातः २ ग्राम हरड का चूर्ण गुड़ के साथ समान मात्रा में लेने से वात तथा पित्त का प्रकोप नहीं होता ।

विहार : इस ऋतु में 'प्रातः पानी-प्रयोग' अवश्य करना चाहिए । वायुसेवन, योगासन, हलका व्यायाम एवं तेल मालिश लाभदायक हैं । प्रातः सूर्योदय से पहले ही उठ जायें । शीतल जलाशय के किनारे अथवा बगीचे में घूमें । शरीर पर चंदन व अगरू के मिश्रण का अथवा केवल चंदन या अगरू का लेप करें । रात को भोजन के बाद थोड़ा टहलें, बाद में खुली छत पर, जहाँ शीतल पवन आता हो, वहाँ शुभ्र शय्या पर शयन करें ।

सिर पर आँवला, चमेली, बादाम, नारियल अथवा लौकी के तेल से मालिश करें । शरीर की मालिश के लिए लौकी के तेल का उपयोग करें । यह बादाम रोगन का नन्हा भाई है । (इसे बनाने की विधि आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'आरोग्यनिधि' में दी हुई है ।)

रात को देर तक जागना और सुबह देर तक सोये रहना त्याग दें । अधिक व्यायाम, अधिक परिश्रम, धूप में टहलना, अधिक उपवास, भूख-प्यास सहना तथा स्त्री-सहवास - ये सभी इस ऋतु में वर्जित हैं ।

*

पुष्टिदायक आम

पका आम खाने से सातों धातुओं की वृद्धि होती है । पका आम दुबले-पतले बच्चों, वृद्धों व कृश लोगों को पुष्ट बनाने हेतु सर्वोत्तम औषध और खाद्य फल है ।

पका आम चूसकर खाना आँखों के लिए हितकर है । यह उत्तम प्रकार का हृदयपोषक है

तथा शरीर में छुपे हुए विष को बाहर निकालता है। यह वीर्य की शुद्धि एवं वृद्धि करता है। शुक्रप्रमेह आदि विकारों और वातादि दोषों के कारण जिनको संतानोत्पत्ति न होती हो उनके लिए पका आम लाभकारक है । इसके सेवन से शुक्राल्पताजन्य नपुंसकता, दिमागी कमजोरी आदि रोग दूर होते हैं।

जिस आम का छिलका पतला एवं गुठली छोटी हो, जो रेशारहित हो तथा जिसमें गर्भदल अधिक हो, ऐसा आम मांस धातु के लिए उत्तम पोषक है।

शहद के साथ पके आम के सेवन से क्षयरोग एवं प्लीहा के रोगों में लाभ होता है। वायु और कफदोष दूर होते हैं। आम के रस में घी और सोंठ डालकर सेवन करने से यह जठराग्निदीपक, बलवर्धक तथा वायु व पित्तदोष नाशक बनता है। वायु रोग हो अथवा पाचनतंत्र दुर्बल हो तो आम के रस में अदरक का रस मिलाकर लेना हितकारी है।

यदि एक वक्त के आहार में सुबह या शाम केवल आम चूसकर जरा-सा अदरक लें तथा डेढ़-दो घंटे बाद दूध पियें तो ४० दिन में शारीरिक बल बढ़ता है तथा वर्ण में निखार आता है, साथ ही शरीर पुष्ट व सुडौल हो जाता है।

आम और दूध का एक साथ सेवन आयुर्वेद की दृष्टि से विरुद्ध आहार है, जो आगे चलकर चमड़ी के रोग उत्पन्न करता है।

लम्बे समय तक रखा हुआ बासी रस वायुकारक, पाचन में भारी एवं हृदय के लिए अहितकर है । अतः बाजार में बिकनेवाला डिब्बाबंद आम का रस स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है।

यूनानी चिकित्सकों के मतानुसार, पका आम आलस्य को दूर करता है, मूत्र साफ लाता है, क्षयरोग मिटाता है, गुर्दे एवं बस्ति (मूत्राशय) के लिए शक्तिदायक है।

कच्चा, स्वाद में खट्टा तथा तिक्त आम खाने से लाभ के बजाय हानि हो सकती है। कच्चा आम खाना हो तो उसमें गुड़, धनिया, जीरा और नमक मिलाकर खा सकते हैं।

*

गर्मियों में हितकारक : गुलकंद

गर्मी के दिनों में शारीरिक गर्मी बढ़ने से दाह, जलन, पित्तदोष आदि विकारों का सामना करना पड़ता है। अतः पहले से ही शरीर को ठंडक पहुँचानेवाले पित्तशामक पदार्थों का सेवन शुरू करना हितकारी है। ऐसे पदार्थों में एक प्रमुख पदार्थ है 'गुलकंद'।

आश्रम में प्रवालपिष्टी, जावंत्री, सौंफ और इलायची से युक्त गुलकंद बनाया गया है, जो बाजारू गुलकंद से अधिक गुणकारी व प्रभावशाली है।

लाभ : प्रवाल आदि सामग्री से युक्त गुलकंद में गुलकंद के गुणों के साथ-साथ इन पदार्थों के लाभकारी गुणधर्मों का भी पूर्णरूप से समावेश रहता है । इससे यह पित्तदोष, रक्तपित्त, रक्तचाप, कब्ज, प्यास की अधिकता, आन्तरिक गर्मी बढ़ना, जलन आदि विकारों को नष्ट करता है और मस्तिष्क को ठंडक पहुँचाता है।

इसका सेवन स्त्रियों के गर्भाशय की गर्मी का शमन करता है और मासिक धर्म में अधिक रक्त जाना (अत्यार्तव) आदि गर्भाशयिक दोषों को भी नष्ट करता है । हाथ-पैर और तलवों में जलन रहना, आँखों में जलन होना, गर्मी के प्रभाव से आँखें लाल हो जाना, गर्मी के कारण त्वचा का रंग काला पड़ जाना, शरीर में छोटी-छोटी दानेदार फुंसियाँ होना, पसीना अधिक आना, आँखों से गर्म पानी निकलना, पेशाब गर्म, लाल और जलन के साथ होना, खाज-खुजली होना आदि विकारों में इसका सेवन अत्यंत लाभकारी है। गर्मी के दिनों में सुबह के समय इसका नित्य सेवन गर्मी से होनेवाले दुष्प्रभावों से शरीर की रक्षा करता है और शारीरिक गर्मी के उद्रेक होने का भय नहीं रहता।

पूज्य बापूजी के एकांत आश्रमों में गुलाब के बगीचे हैं। उनसे विधिवत् गुलकंद बनाया जाता है। गुलाब के फूलों को अच्छी तरह धोकर उनकी पँखुड़ियाँ निकाल ली जाती हैं। फिर उनमें उचित मात्रा में चीनी मिलायी जाती है। इस मिश्रण को बर्तन में रखकर ऊपर से कपड़ा बाँधकर ६० दिनों

तक सूर्य की धूप व चन्द्रमा की चाँदनी में रखकर पुष्ट किया जाता है। फिर उसमें प्रवालपिष्टी, जावंत्री और इलायची मिलायी जाती है जो कि क्रमशः तीन हजार रुपये, एक हजार रुपये और सात सौ रुपये प्रति किलो मिलती है।

आप अपने घर में उपर्युक्त विधि से गुलकंद बनायें अथवा आश्रम द्वारा बनाये गये गुलकंद का लाभ लें।

प्राप्तिस्थान : संत श्री आसारामजी आश्रम व आश्रम की सेवा समितियाँ।

*

स्वास्थ्यवर्धक अंगूर

अंगूर शीतल, नेत्रों के लिए हितकारी, पुष्टिकारक, रस में मधुर, स्वरशोधक, रक्तशोधक, वीर्यवर्धक तथा शरीर में स्थित विजातीय द्रव्यों को निकालनेवाला होता है।

भारतीय चिकित्सा शास्त्र के प्राचीन आचार्य वागभट्ट के अनुसार, अंगूर का रस आँतों तथा गुर्दों की कार्यक्षमता को बढ़ाता है। अंगूर कब्ज नहीं होने देता, यकृत-विकारों में लाभकारी सिद्ध होता है, अतिसार को मिटाता है तथा पाचन-संस्थान की क्रिया को सुचारु रूप से चलने में सहायता करता है।

अंगूर में पर्याप्त मात्रा में विटामिन 'ए', 'सी' और लौह-तत्त्व होता है। इसमें पोटेशियम बहुत मात्रा में होता है, जो गुर्दे के रोग, उच्च रक्तचाप तथा चर्मरोग में लाभकारी है। रोगियों के लिए अंगूर उत्तम पथ्य है। इसके सेवन से मूत्रमार्ग की बाधाएँ दूर होती हैं। अर्बुद (कैंसर), क्षयरोग, आंत्रपुच्छ शोथ (एपेंडिसाइटिस), जोड़ों के दर्द, गठिया रोग तथा बच्चों के सूखा रोग में यह लाभदायक है।

अंगूर को जब विशेष प्रकार से सुखा लिया जाता है तो उसे मुनक्का कहते हैं। यह लाल और काला, दो प्रकार का होता है। अंगूर के सभी गुण मुनक्के में रहते हैं। यह पित्तहारी, तृप्तिकारक, हृदय के लिए लाभकारी तथा श्रम, दाह, मूर्च्छा, श्वास, ज्वर, तृषा और वात नाशक है। इसके सेवन से रस, रक्त, शुक्र और ओज आदि सभी धातुओं की वृद्धि होती है।

किशमिश भी सूखे हुए अंगूर का ही दूसरा रूप है। इसमें भी अंगूर के सारे गुण विद्यमान होते हैं। किशमिश हलकी, सुपाच्य, खाँसी और पांडुनाशक है। वृद्धावस्था में किशमिश-मुनक्के का प्रयोग स्वास्थ्य की रक्षा करता है। किशमिश और मुनक्के की शर्करा शरीर में अति शीघ्र पचकर आत्मसात् हो जाती है।

'सुश्रुत संहिता' के अनुसार अंगूर क्षय रोग का निवारण करता है।

अंगूर आँतों के विभिन्न कष्टों में, यकृत तथा पेट के कष्टों में, उलटी तथा मुख से खून निकलने पर, मुख का स्वाद कड़वा होने पर बड़ा लाभकारी है। प्रतिदिन २५० से ३०० मि.ली. अंगूर के रस का सेवन किया जाय तो इससे रक्ताल्पता (एनीमिया रोग) कुछ ही दिनों में दूर हो जाती है।

दाँत निकलते समय बच्चे को अजीर्ण या कब्ज के कारण पेट में ऐंठन होने पर प्रातः व सायं अंगूर का एक चम्मच रस देना लाभकारी है। बच्चे के गले और मुख के रोगों में भी यह उपयोगी है।

अंगूर शरीर को ऊर्जा, स्फूर्ति और शक्ति प्रदान करता है। यूरोप में अंगूर-कल्प द्वारा निर्बल रोगियों को सबल बनाया जाता है।

अंगूर मंदाग्नि से छुटकारा दिलाता है। यह पेचिश, हृदयरोग तथा मूत्रवह संस्थान के रोगों में भी उपयोगी है। अंगूर का रस यकृत व आमाशय को सशक्त बनाता है। यह वात व्याधि, गठिया और जोड़ों की सूजन में भी बड़ा लाभकारी है। जिन माताओं को दूध कम आता है, उन्हें अंगूर खाने चाहिए। इसकी शर्करा मधुमेह (डायबिटीज) के रोगी को हानि नहीं पहुँचाती। यह नेत्रज्योति और भूख बढ़ाता है तथा नया रक्त पैदा करता है।

अंगूर खाने से पहले उन्हें पानी से भलीभाँति धो लें क्योंकि उन पर मच्छर और मक्खियाँ बैठती हैं तथा अंगूर की खेती करनेवाले अंगूरों पर कीटनाशक दवाओं का छिड़काव करते हैं।

कच्चे-खट्टे अंगूर न खायें, पके-मीठे ही खायें। इनमें गुण और मिठास भरनेवाले मधुमय प्रभु को ध्यायें व आत्मिक लाभ उठायें...

- धन्वंतरि आरोग्य केन्द्र, संत श्री आसारामजी आश्रम, अमदावाद।

एक पल में छूट गयी गंदी आदत

मुझे पिछले ४ वर्षों से जर्दा-गुटखा खाने की गंदी आदत पड़ गयी थी। इससे छुटकारा पाने की कई बार कोशिश की, परंतु हर बार नाकामयाब रहा। एक दिन मैंने दुकान का हिसाब करने के लिए आश्रम की स्टाल से एक रजिस्टर खरीदा। उसमें हम नौजवानों के लिए, जिन्हें जर्दा-गुटखा खाने की गंदी लत लगी है, पूज्य बापूजी का पावन संदेश छपा हुआ था। साथ ही इन्हें खाने से होनेवाले दुष्परिणामों के बारे में भी जानकारियाँ दी गयी थीं। मैंने उसे कई बार पढ़ा।

खुदा कसम! बापूजी आपको हकीकत सुनाता हूँ, उसी दिन से न जाने कैसे मेरी वह बुरी आदत हमेशा-हमेशा के लिए छूट गयी। मैं आश्चर्य में पड़ गया कि यह कैसा करिश्मा है! जिस आदत से छुटकारा पाने के लिए मैं वर्षों से परेशान था, वह एक ही पल में छूट गयी। अब तो मैंने उस गंदी आदत से जिंदगीभर के लिए तौबा कर ली है।

मुझे बापूजी की दुआ चाहिए कि मैं समाज-हित के लिए कुछ कर सकूँ। *- अब्दुल नईम खान,*
पिपरिया, जि. होशंगाबाद (म.प्र.)

*

सारस्वत्य मंत्र से हुए अद्भुत लाभ

मैंने १९९८ में 'विद्यार्थी उत्थान शिविर, सोनीपत' में पूज्य गुरुदेव से सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा ली। दीक्षा के बाद नियमित मंत्रजप करने से मैं इतना कुशाग्र बुद्धिवाला और स्वावलंबी हो गया कि मैंने एक महीने में ही ट्यूशन छोड़ दी और स्वयं खूब मेहनत करने लगा। मैं स्कूल भी पैदल आने-जाने लगा, जिससे मैंने स्कूल बस का किराया बचा लिया। मंत्रजप के प्रभाव से मुझे ९वीं, १०वीं, ११वीं की परीक्षाओं में प्रथम स्थान प्राप्त हुआ।

१२वीं की परीक्षा के समय मेरा स्वास्थ्य खराब होने के कारण मैं जप ठीक से नहीं कर सका, फिर भी ७९% अंकों से पास हुआ। उसके बाद इंजीनियरिंग की परीक्षा में भी उत्तीर्ण रहा।

- कुलदीप कुमार,
D-२३४, वेस्ट विनोदनगर, दिल्ली।

मैंने दिसम्बर १९९९ में छत्तीसगढ़ के भाटापारा गाँव में पूज्य गुरुदेव से सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा ली। तत्पश्चात् मैं नियमित रूप से जप-ध्यान-प्राणायाम करता था, जिससे मुझे बहुत लाभ हुआ। पूज्य बापूजी की कृपा और सारस्वत्य मंत्रजप के प्रभाव से मुझे १२वीं की बोर्ड की परीक्षा में ८४.६% अंक मिले। *- विरेन्द्र कुमार कौशिक,*
डोंगरगाँव, जि. राजनांदगाँव (छ.ग.)

*

१३ मार्च २००३ की घटित घटना

हमने घाटकोपर स्टेशन से मार्च महीने की 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका खरीदी। उसके बाद ८.१५ बजे घाटकोपर से थाणे जाने के लिए, वी.टी. से कर्जत जानेवाली ट्रेन में चढ़े, परंतु तभी याद आया कि हमारी सूरत की टिकट कन्फर्म नहीं है और हमें 'होली शिविर, सूरत' में जरूर जाना था। मन में पूज्य गुरुदेव के दर्शन की व उनकी पावन वाणी सुनने की तीव्र उत्कंठा थी। इसलिए टिकट कन्फर्म कराने के लिए हमने वह ट्रेन छोड़ दी।

बाद में पता चला कि उसी ट्रेन में और वह भी उसी कोच में जिसमें हम चढ़े थे, भयंकर बम विस्फोट हुआ। जिस कारण कुछ महिलाएँ मर गयीं, कुछ घायल हो गयीं।

कैसी है गुरुदेव की कृपा! ट्रेन में चढ़कर भी हम उतर गये। गुरुदेव के दर्शन करने जाना है इस निश्चय ने और 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका ने, जिस पर इस बार पूज्य बापूजी के दो-दो चित्र हैं, मानों, सूरत की टिकट कन्फर्म कराने का निमित्त बनाकर हमें इस भयंकर दुर्घटना से बचने का अवसर प्रदान किया। *- कु. दीपा, कु. रक्षा, थाणे (मुंबई, महा.)*

अमदावाद आश्रम (गुज.), २ से ४ अप्रैल : यहाँ त्रिदिवसीय 'चेटीचंड महोत्सव व ध्यानयोग साधना शिविर' संपन्न हुआ । पूर्वकाल में महर्षि जाबल्य की तपस्थली तथा वर्तमान में पिछले ३१ वर्षों से ब्रह्मनिष्ठ पूज्य बापूजी के तीव्र आध्यात्मिक स्पंदनों से स्पंदित आश्रम के दिव्य वातावरण में पूज्यश्री ने साधकों को ध्यानयोग के अनेकानेक दिव्य अनुभूत प्रयोग कराये ।

कुसंग व पतन के क्षणों में तथा विपरीत परिस्थितियों में अपने आध्यात्मिक धन की सुरक्षा हेतु योगनिष्ठ पूज्य बापूजी ने 'आध्यात्मिक सुरक्षा कवच' निर्मित करने की विधि बतायी । गीता की पंक्ति **'सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि'** को चरितार्थ करनेवाले गीता-मर्मज्ञ परम पूज्य बापूजी ने समता व सौहार्दता का संदेश देते हुए कहा : ''**मुझे तो साँप भी मेरा मित्र लगता है, यार लगता है । सबमें ईश्वर है । किसीसे द्वेष करने से अपना ही दिल खराब होता है और ईश्वर से प्रेम करने से अपना दिलो-दिमाग आबाद होता है ।**''

३ अप्रैल को चेटीचंड महोत्सव के निमित्त विभिन्न वेशभूषाओं में सुसज्जित अमदावाद के समस्त सिंधी पंचायतों की 'झुलेलाल शोभायात्रा' की झाँकियाँ 'पाँच कुआँ' पर एकत्रित हुई । बरसों से प्रार्थना करते सिंधी भक्तों के दिल की पुकार आखिर इस बार पूज्यश्री ने सुन ही ली और पहुँच गये अपने प्यारे-दुलारे भक्तों के बीच शोभायात्रा की शोभा बढ़ाने । तमाम पंचायतों के मुखिया, आगेवानों ने इस लोकलाड़ले संत का भावभीना स्वागत किया और कहा कि 'पूज्य बापूजी ने हमारा और हमारे देश का गौरव तथा जनमानस में शांति, आनंद एवं माधुर्य बढ़ाया है । इन बेजोड़ संत ने लाखों तबाह होते युवान-युवतियों की जिंदगी बचाने का भगीरथ कार्य उठा रखा है ।' वहाँ एकत्रित मुख्य व्यक्तियों में कोई संसद सदस्य, कोई नगर अध्यक्ष तो कोई फेडरेशन का अध्यक्ष था । भिन्न-भिन्न संगठनों के आगेवानों ने लोकलाड़ले संत के पावन करकमलों से अपनी इस विशाल शोभायात्रा का शुभारंभ करवाया । सभीके हृदय श्रद्धा एवं अहोभाव से भरे थे और आँखें अपने प्रभु का दीदार करके प्रेमाश्रु छलका रही थीं । पूज्यश्री के वचनों ने मन में मधुरता व मति में तात्त्विक व आत्मिक ज्ञान का भरपूर ओज भर दिया । पूज्यश्री की एक झलक पाने सड़कों पर अपार भीड़ उमड़ आयी जिसमें कहीं टी.वी. चैनलवाले तो कहीं रेडियो प्रसारणवाले, कहीं 'हरि ॐ' वाले तो कहीं झुलेलालवाले, कहीं गॉडवाले तो कहीं अल्लाहवाले थे लेकिन सभीको पूज्य बापूजी अपनी-अपनी नजर से अपने ही लग रहे थे ।

पूज्य बापूजी के सम्मान में अमदावाद महानगरपालिका द्वारा सर्वसम्मति से साबरमती से आश्रम की ओर जा रहे मार्ग का नाम **'संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग'** रखा गया ।

बापूनगर, अमदावाद (गुज.), ५ व ६ अप्रैल : अमदावाद महानगर के अंचल में स्थित बापूनगर में दो दिवसीय जाहिर सत्संग-कार्यक्रम सम्पन्न हुआ, जिसमें स्थानीय नगरवासियों ने पूज्यश्री की आत्मस्पर्शी मधुर वाणी का रसास्वादन किया ।

मुंबई (महा.), १० से १३ अप्रैल : इन दिनों में 'कालीना पुलिस ग्राउण्ड, सांताक्रुज (मुंबई)' स्वस्थ, सुखी व सम्मानित जीवन जीने की कुंजियाँ प्रदान करनेवाला आध्यात्मिक केन्द्र बना रहा । पूज्यश्री की शास्त्रसम्मत, अनुभवयुक्त अमृतवाणी से आनंद व शांति के सरोवर में सराबोर होने मायानगरी मुंबई के पुण्यात्मा नगरवासी बड़ी तादाद में उमड़ पड़े । पहले ही दिन विशाल पंडाल नन्हा पड़ गया । आत्मशांति व आत्मतृप्तिदायी उन दिव्य क्षणों में पंडाल के बाहर धूप में खड़ी महिलाएँ अपने सिर पर आँचल लिये व पुरुष सिर पर रुमाल रखे सत्संगामृत के पान में तल्लीन रहे । पूज्यश्री ने प्रसन्न हृदय से उनकी ओर निहारते हुए कहा : ''**हालाँकि मुंबई में सिटी केबलों द्वारा सत्संग का सीधा प्रसारण चल रहा है फिर भी आप इतनी तादाद में धूप सहते हुए खड़े हैं । हम आपकी सूझबूझ और तितिक्षा का आदर करते हैं, अभिवादन करते हैं । आज भले ही भौतिक दृष्टि से उन्नत जीवन जीने के तरह-तरह के साधन हैं, परंतु सही मायने में जीवन को देखने, समझने और जीने की एक नवीन व वास्तविक दृष्टि सत्संग से ही मिलती है । हर मनुष्य सुखी होना चाहता है । इसका ताजा उदाहरण अमेरिका-इराक युद्ध है । अमेरिका तेल के भंडार पर अपना प्रभुत्व जमाकर सुखी होना चाहता है, लेकिन यह अलग बात है कि आज करोड़ों लोग और**

कई देश उस पर लानत बरसा रहे हैं । वास्तविक सुख और शांति युद्ध से कभी नहीं मिल सकती ।''

इन्दौर (म.प्र.), १४ से १८ अप्रैल : सत्संग-कार्यक्रम के प्रथम २ दिन पूज्यश्री के प्रेरक व अनुशासनबद्ध मार्गदर्शन में मध्यप्रदेश की इन्दौर नगरी में 'विद्यार्थी सर्वांगीण उत्थान शिविर' संपन्न हुआ । मध्यप्रदेश के अलावा देश के विभिन्न राज्यों से आये छात्र-छात्राएँ, शिक्षकबंधु व अभिभावकगण भी इस शिविर में सम्मिलित हुए । अपने समक्ष नौनिहालों में सुसंस्कार-सिंचन का अनुपम दृश्य देखकर वे सभी आनंदित हुए, साथ ही उनके उज्ज्वल भविष्य के प्रति आश्वस्त भी हुए । पूज्यश्री ने विद्यार्थियों को शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न एवं बुद्धि को तेजस्वी बनाने की युक्तियाँ सिखायीं ।

बच्चों तथा उनके अभिभावकों ने यहाँ पूज्यश्री में देखा - मातृसम स्नेह, पितृसम अनुशासन, गुरुसम मार्गदर्शन और मित्रसम मिलनसार व हितैषी भाव-भंगिमाएँ ।

देश के विभिन्न भागों में बाल संस्कार केन्द्रों व विद्यार्थी शिविरों के माध्यम से सुसंस्कार सिंचन करनेवाले पूज्यश्री ने आधुनिक शिक्षा में बदलाव की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा : **''विद्यालयों, महाविद्यालयों में विद्यार्थी जो ज्ञानार्जन करते हैं, वह ऐसा होना चाहिए जो उनके एवं दूसरों के जीवन में उपयोगी सिद्ध हो । शिक्षण संस्थाएँ प्रमाणपत्र व उपाधि प्रदान करने के कारखाने बनकर न रह जायें । शिक्षा छात्र-छात्राओं को संयमी, आत्मनिर्भर, स्वावलंबी तथा आदर्श नागरिक बनाने में सहायक हो तथा बच्चों में आध्यात्मिक विकास के सही मूल्यांकन की भावना भरनेवाली हो । इसके अभाव के कारण यह युग युवा पीढ़ी के लिए उत्थान का नहीं, अपितु घोर पतन का युग बन रहा है । यह शिक्षा-पद्धति विद्यार्थियों को विद्याप्राप्ति हेतु पुरुषार्थ करनेवाले पुरुषार्थी नहीं बनाती बल्कि केवल परीक्षा उत्तीर्ण करने हेतु उद्यम करनेवाले परीक्षार्थी बना रही है । इससे उद्यम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम सम्पन्न मेधावी युवा नहीं, बल्कि कंपनियों, रोजगार केन्द्रों और दफ्तरों में चक्कर काटनेवाले पराधीन नौकर बनने की शिक्षा बच्चों को मिल रही है । अब देश के युवानों, अभिभावकों, शिक्षाविदों और कर्णधारों को जाग्रत हो जाना चाहिए । सनातन सत्शास्त्रों और महापुरुषों द्वारा प्रदत्त मार्ग का अवलंबन लेकर शिक्षा-पद्धति में सुधार किया जाना चाहिए । भारत को अधःपतन की ओर ले जानेवाले दीर्घ षड्यंत्र को समझकर, इसे पुनः दिव्यता की ओर ले जाने हेतु कृतसंकल्प होना चाहिए ।''**

१६ अप्रैल को देशभर से आये पूनम व्रतधारी साधकों ने पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग के पश्चात् अन्न-जल ग्रहण किया । प्रतिदिन यहाँ ब्रह्ममुहूर्त की अमृतवेला में पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में आत्मशांतिदायी गहरे ध्यान के प्रयोग होते रहे, इस ध्यान में गोता लगाकर शिविरार्थीगण संयोगजन्य सुख के पार व वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति की गुलामी से रहित अलौकिक आनंद में मस्त होते रहे और इन अनुभवसंपन्न सूत्रों को आत्मसात् करते रहे ।

हनुमानजी की आराधना

कलिकाल में हनुमानजी की आराधना से शीघ्र ही सिद्धि मिलती है । सिद्धि की अभिलाषावाला नीचे लिखे मंत्र से ७ दिन में सिद्धि प्राप्त कर सकता है ।

'ॐ हं पवन नन्दनाय स्वाहा ।'

मंत्रसिद्धि की पूरी विधि किसी मंत्रज्ञाता विद्वान ब्राह्मण से जानकर घी का दिया जलाकर एकांत में अथवा जनशून्य घर में ही जप करें । नदी तट पर किसी शुद्ध निर्जन स्थान में बैठकर भी जप कर सकते हैं । इस एकादश अक्षर मंत्र के नित्य ६ हजार जप करने चाहिए । ७वें दिन, दिन-रात जप करने पर रात्रि के अंतिम प्रहर में हनुमानजी किसी भी भयानक रूप में प्रकट हो सकते हैं । यदि मंत्रजापक डरे नहीं या किसी प्रकार के रूप में मोहित न हो तो हनुमानजी उसके सामने अपने असली स्वरूप में प्रकट हो जायेंगे और उसकी लौकिक या पारलौकिक अभिलाषा पूर्ण करेंगे ।

पूज्य बापूजी के आगामी कार्यक्रम

(१) पानीपत (हरियाणा) : गीता भागवत सत्संग, ९ से ११ मई २००३, हुडा ग्राउण्ड, सेक्टर-२५, फेस-२. फोन : (०१८०)२६६०२०२, २६६६५४७, २६६०९३८.

(२) हरिद्वार : गीता भागवत सत्संग, १५ से १८ मई २००३, पंत द्वीप, हर की पौड़ी । फोन : (०१३३४)२६१२५९, २६१८७६, ९८३७१३७११७.

पूर्णिमा दर्शन : १६ मई २००३, हरिद्वार में ।

१ कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती।
करमूले तु गोविंदः प्रभाते करदर्शनम् ॥
हर रोज प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में उठना, ईश्वर का ध्यान और 'करदर्शन' करके बिस्तर छोड़ना तथा सूर्योदय से पूर्व स्नान करना।

२ अपनी सुषुप्त शक्तियाँ जगाने एवं एकाग्रता के विकास के लिए नियमित रूप से गुरुमंत्र का जप, ईश्वर का ध्यान और त्राटक करना।

3 बुद्धिशक्ति के विकास एवं शारीरिक स्वास्थ्य के लिए हर रोज प्रातः सूर्य को अर्घ्य देना, सूर्यनमस्कार एवं आसन करना।

४ स्मरणशक्ति के विकास के लिए नियमित रूप से भ्रामरी प्राणायाम करना एवं तुलसी के ५-७ पत्ते खाकर एक गिलास पानी पीना।

५ माता-पिता एवं गुरुजनों को प्रणाम करना। इससे जीवन में आयु, विद्या, यश व बल की वृद्धि होती है।

६ महान बनने का दृढ संकल्प करना तथा उसे हर रोज दोहराना, खराब संगति एवं व्यसनों का दृढ़तापूर्वक त्याग कर अच्छे मित्रों की संगति करना तथा चुस्तता से ब्रह्मचर्य का पालन करना।

Sri Sri 1008
Lord. Parambujya Sant
Sri Asha Ram
Bapuji
Maharaj

परम पूज्य
संत श्री आसारामजी बापू

हे विद्यार्थी ! सफलता के ये आठ स्वर्णिम सूत्र तुझे महान बना देंगे।

७ समय का सदुपयोग करना, एकाग्रता से विद्या-अध्ययन करना और मिले हुए गृहकार्य को हर रोज नियमित रूप से पूरा करना।

८ हर रोज सोने से पूर्व पूरे दिन की परिचर्या का सिंहावलोकन करना और गलतियों को फिर न दोहराने का संकल्प करना, तत्पश्चात् ईश्वर का ध्यान करते हुए सोना।

R.N.I. NO. 48873/91 POSTAL REGISTERED. NO. GUJ-1132. LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENSE NO. 207. POSTING FROM AHMEDABAD 2-15 OF EVERY MONTH. ✲ BYCULLA STG. WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO. 236
REGD NO. TECH/47 833/MBI/2003 POSTING FROM MUMBAI 9 & 10th OF EVERY MONTH. ✲ DELHI REGD. NO. DL-11513/2003 WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO.-U(C) 232/2003 POSTING FROM DELHI 10-11 OF EVERY MONTH.